वर्ष १ अंक ८
विक्रम संवत् २०७६ वैशाख
मई २०१९

आर्ष क्रान्ति

वैदिक समाज व्यवस्था के लिए समर्पित

आर्य लेखक परिषद्

ओ३म्

आर्य लेखक परिषद् का मुख पत्र

आर्ष क्रान्ति

मई २०१९

वर्ष—१ अंक—८,
विक्रम संवत् २०७६
दयानान्दाब्द— १९५
कलि संवत् — ५११९
सृष्टि संवत् —१,९६,०८,५३,१२०

प्रधान सम्पादक
वेदप्रिय शास्त्री
(७६६५७६५११३)

❖

समन्वय सम्पादक
अखिलेश आर्येन्दु
(८१७८७१०३३४)

❖

सह सम्पादक
प्रांशु आर्य (कोटा)
(९९९३९७०९४०)

❖

आकल्पन
प्रवीण कुमार (महाराष्ट्र)

❖

सम्पादकीय कार्यालय
ए—११,त्यागी विहार, नांगलोई,
दिल्ली—११००४१
चलभाष— ८१७८७१०३३४

अनुक्रम

विषय	पृष्ठ
१ संघर्ष की दिशा (सम्पादकीय)	०३
२ हम कैसे उपचार करें (कविता)	०५
३ मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, सिन्धुघाटी......	०६
४ Histroy Belongs to Kshatriyas	१०
५ श्रम से उपार्जित खावें, अकेले न खावें	१३
६ ऐसा जला अलाव रे (कविता)	१६
७ जिज्ञासा की सही दिशा है मुक्ति का मार्ग	१७
८ क्या नये—नये वेदमंत्र ऋषियों ने बनाये हैं?	१९
९ संगठन—सूक्त	२२
१० स्वदेशी नमक (कहानी)	२३

ईमेल — aryalekhakparishad@gmail.com
वेबसाइट — https://aryalekhakparishad.com/
फेसबुक आर्य लेखक परिषद्

Digital

संघर्ष की दिशा

महर्षि दयानन्द के आगमन से पूर्व संसार पराधीन था, परतंत्र था। कुछ लोग मानव मात्र का स्वत्वहरण करने के लिए बल, छल, क्रूरता, बर्बरता पूर्वक संलग्न थे। सामान्य जन समुदाय के साथ उनका सम्बन्ध वही था जो घास के साथ घोड़े का होता है। कुछ को खा लेना शेष को पैरों से रगड़ देना। निज उदर और शिश्न की भूख मिटाने के लिए जनसामान्य की श्रम पूर्वक कमाई को, जीने के साधनों को और बहन बेटियों को जबरन छीन लेने का रिवाज कायम हो चुका था। ऐसा करने वाले स्वयं को उच्च और सभ्य कहते थे। पराधीनता और परतंत्रता की पीड़ा को वही समझ सकता है जिसने उसे भोगा है और नंगी आँखों से देखा है अथवा जो संवेदनशीलता और सहानुभूति से युक्त है। उक्त शोषक वर्ग को कुछ भी नाम दे सकते हैं। काम इसका वही है जो हमने ऊपर लिख दिया है। यही लोग मानवता के असली शत्रु हैं। इन्हीं के साथ मानवता रक्षकों को लड़ना होता है। स्वत्व हरण करने वालों की सेना के साथ स्वत्व रक्षक सेना का युद्ध अनिवार्य और अवश्यम्भावी है। सम्पूर्ण मानवी इतिहास यही बताता है।

हमारा भारत देश भी पराधीन, परतंत्र था, एक हजार साल की पराधीनता तो हमें याद है। डचों, फ्रांसीसियों, मुसलमानों और ईसाइयों के द्वारा एक हजार साल से जूते और हंटर खा रहे थे, इज्जत अस्मत धन–दौलत लुटवा रहे थे, त्राहि–त्राहि कर रहे थे। मुक्ति का मार्ग नहीं सूझ रहा था। विवश होकर शोषकों, लुटेरों, मानवता के शत्रुओं का गुणानुवाद करने में लगे हुए थे। ऐसे विकट समय में महर्षि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ। उसने हमें अपने–पराए और शत्रु–मित्र की पहचान करवाई। हमारे स्वाभिमान को जागृत करके स्वराज्य का महत्व समझाया और शोषक शक्तियों के साथ संघर्ष करने के लिए समुद्यत किया। परिणाम स्वरूप श्यामजी कृष्ण वर्मा, भाई परमानन्द, लेखराम, श्रद्धानन्द, गुरुदत्त, लाला लाजपत राय, रामप्रसाद बिस्मिल और भगत सिंह जैसे अनेक वीर नरपुंगवों ने अपनी प्राणाहुति प्रदान करके विदेशी शोषकों से मुक्ति दिलाई, स्वतंत्रता और स्वाधीनता के दर्शन हुए।

परन्तु स्वदेशी शोषकों से मुक्ति मिलना अभी शेष था। इनसे हम अभी तक मुक्त नहीं हो सके, हमारा स्वत्वहरण अनवरत जारी है। हमने अपने पराए की पहचान भुलादी और शत्रुओं को ही अपना मित्र और सगा सम्बन्धी समझने लगे हैं। परिणाम स्वरूप आज हमारे अस्तित्व को ही खतरा उत्पन्न हो चुका है। समय रहते नहीं चेते तो आर्य, आर्य समाज और वैदिक धर्म का नाम भी शेष नहीं रहेगा।

आइए शत्रुओं को पहचानने का यत्न करते हैं, वेद के शब्दों में – **'ये रूपाणि प्रतिमुञ्चमाना असुराः सन्तः स्वधया मदन्ति'**।

जो अपने असली रूपों को छिपाकर असुर होते हुए भी हमारे अपने बनकर माल चर रहे हैं उन्हें पहचानो।

ये हैं हमारे पण्डे–पुरोहित, पुजारी, ज्योतिषी, धर्मगुरु, कथावाचक, राजे–महाराजे, राजनेता, शासक–प्रशासक, काली कमाई करने वाले व्यवसायी, व्यापारी और अपराधजगत से जुड़े अन्य लोग। विडम्बना यह है कि ये लोग आपको अपनी माता, पत्नी, पिता, पुत्र, सगे भाई और रिश्तेदार के रूप में भी मिल सकते हैं। इनसे निपटने में आपका मोह आड़े आकर आपको कर्तव्य विमुख कर देता है। ये वे लोग हैं जो स्वयं श्रम नहीं करते, दूसरों के श्रम पर पलते हैं। दूसरों का सुख भाग छीनने के लिए बल और छल का आश्रय लेते हैं और एक ऐसे कर्मकाण्ड का जाल बुनते हैं जिसमें फँसाकर लोगों की कमाई का अधिकांश भाग छीन लेते हैं। जन सामान्य को उनके मूल अधिकारों से वंचित कर देते हैं। उनका शोषण और प्रतारण करते हैं।

उक्त शोषक लोग अपने को श्रेष्ठ पुरुष, मानवता का सेवक साबित करने और सत्ता हथियाने के लिए कवि, लेखक, पत्रकार, चाटुकार पालते हैं और अपना गुणानुवाद करवाते हैं, भले लोगों का चरित्र हनन करवाते हैं। परिवारों में फूट और कलह उत्पन्न करवाते हैं। संस्थाओं की चल–अचल सम्पत्ति हथियाने का षड्यंत्र रचते हैं। यही इस देश के असली गद्दार हैं। हमारा संघर्ष इन्हीं के साथ है। यही मानवता के शत्रु हैं और संसार के सभी शोषक इनकी ही प्रशंसा

करते हैं और न्याय क्षेत्र में इनका ही पक्ष लेते हैं। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश और व्यवहारभानु में इनका ही खण्डन किया है, इन्हे ही समाज का और मानवता का शत्रु माना है। इन्हें ही पाषण्डी कहा है। इन लोगों ने धर्म के नाम पर, भगवान के नाम पर कौम को लूटा, अपने ऐशो आराम के लिए बहन–बेटियाँ तक विधर्मियों को सौंप दी, जागीरें हासिल की, राय साहब, राजा, सर, हिजहाइनेस के तमगे और खिताब हासिल किए। प्रजा का उत्पीड़न किया, तीन तीन सौ औरतें रखीं, लोगों से मुफ्त में बेगार करवाई, ब्याज पर ब्याज चढ़ाकर आमजन को कंगाल फटे हाल बना डाला। आज इन्हीं लोगों ने अपना रूप बदलकर राष्ट्रवादी, देशभक्त, स्वदेशी, स्वाभिमान के ध्वजवाहक, राम कृष्ण के असली वारिस होने का दावा करते हैं। परन्तु महर्षि दयानंद से इन्हें डर लगता है और उसे योजनाबद्ध ढंग से तिरोहित करने में लगे रहते हैं। जिस किसी भी राजनीतिक पार्टी को देखेंगे, यही लोग वर्चस्व में मिलेंगे। अतः संघर्ष पार्टी से नहीं करना, संघर्ष इन शोषकों और उनके दलालों के साथ करना है। इन्हें पहचानो। हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई से संघर्ष नहीं है, हमारा संघर्ष मानवता के शत्रुओं और शासकों के साथ है। इन्हीं सब के बीच सच्चा मनुष्य, श्रेष्ठ पुरुष छिपा हुआ है उसे खोजो और अपने साथ जोड़ो। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का यही तात्पर्य है। 'संसार के श्रेष्ठ पुरुषो एक हो' यह हमारा नारा है। इंसान से इंसान का हो भाईचारा, यही पैगाम हमारा। इसीलिए महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज बनाया था और लिखा था 'संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है'। ढूंढने पर भी आपको ऐसी मिसाल नहीं मिलेगी। कितना बड़ा ह्रदय था ऋषि का। सम्पूर्ण वेद भाष्य में कहीं पर भी हिन्दू मुसलमान नहीं लिखा सर्वत्र हे मनुष्यो! का ही सम्बोधन दिया है।

वर्तमान में लोगों ने मुखौटे महापुरुषों के लगा रखे हैं और काम उनके विरुद्ध करने में लगे हैं। धर्म, मजहब और सम्प्रदाय की आड़ में एक दूसरे का स्वत्वहरण बल या छल से करना, यही इनका मुख्य उद्देश्य है। अतः हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन आदि के रूप में किसी को भला–बुरा बताना ठीक नहीं है। इनमें से उनको पहचानिए जो मानवता के शत्रु और बल या छल से आमजन का स्वत्वहरण कर रहे हैं। उन्हें भी पहचानिए जो मानवता का हित चाहने वाले हैं। हमें अपना जनाधार सुदृढ़ करना होगा, बढ़ाना होगा। देखना होगा कि हमारे अस्तित्व को खतरा किधर से ज्यादा है, उधर से ही अपनी रक्षा का मुख्यतया ध्यान रखना होगा। स्वयं को सुदृढ़, रण कौशल और रक्षा साधनों से समृद्ध बनाना होगा।

स्वयं की ओर देखो स्वयं से पूछो कि क्या आप आर्य हैं ? या कि नस्ली अहंकार में फँसे जातिवादी हैं। आज आर्य समाज भी हर जाति का अलग–अलग है। विद्वान और संन्यासी भी प्रत्येक जाति के अपने–अपने हैं। वहाँ भी गरीब और अमीर का भेद है, ऊँच नीच का भेद है। बड़ा जोखम है आर्य बनने में, पहले स्वयं के साथ संघर्ष फिर शत्रु के साथ। इसलिए दुरंगी छोड़ दे एक रंग हो जा, नहीं तो शत्रुओं का ही पोषण करता रहेगा, सम्पूर्ण श्रम व्यर्थ ही चला जाएगा।

याद रखो, आर्य और दस्यु कोई जाति नहीं है, एक क्वालिटी है। **'अकर्मादस्युः अन्यव्रतो अमानुषः'**। अर्थात् कामचोर, असत्यवादी, मनुष्यता रहित जो कोई भी है, वह दस्यु है। इसके विपरीत जो कर्मनिष्ठ, सत्यवादी और मानव हितेषी है, वह आर्य है, श्रेष्ठ है। धरती का वैभव प्रभु ने इनके लिए ही उत्पन्न किया है। **'विजानीहि आर्यन् ये च दस्यवः'।** जानो कौन आर्य है और कौन दस्यु ?

महर्षि दयानन्द ने जिन ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की आलोचना की है वास्तव में वे दस्यु ही हो चुके थे। गुण, कर्म पर आधारित ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आर्य होते हैं और नाम मात्र के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वास्तव में दस्यु हैं, जिनको ठीक करना है। इसी तरह विश्व में सर्वत्र आर्यों की खोज करनी है और दस्युओं को आर्य बनाना है, यही हमारे संघर्ष की दिशा है।

घोषित शत्रुता से संवाद समाप्त हो जाता है, अतः आर्यकरण का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। विचार विनिमय के बिना मस्तिष्क परिवर्तन नहीं किया जा सकता। विचार विनिमय का ही परिणाम था कि बड़े–बड़े आलिम–फाजिल, मौलवी और पादरी शुद्ध होकर सदा के लिए आर्य समाज के हो गए और जो नहीं हो सके वह भी मन से दयानन्द के हो गए और उसकी मृत्यु पर फूट–फूट कर रोए। आर्यो! यह हमारे

संघर्ष की दिशा है। जिन्हें हम आर्य बना कर लाते हैं उन्हें सम्हालना, सँवारना और अपने में आत्मसात करना यह अति आवश्यक कार्य था जो नहीं किया गया, इसे करना ही होगा। आर्यकरण का तात्पर्य यही है कि बल, छल चोरी से किसी का स्वत्वहरण न करने वाला मानव हितैषी और मानवता की रक्षा के लिए प्राणों की बाजी लगा देने वाला व्यक्तित्व बनाया जावे, शेष सारा कर्मकाण्ड इसी उद्देश्य के लिए है। आर्यो! अपनी शक्ति सोच और सम्पत्ति इसी के लिए लगा दो। हमारे संघर्ष की दिशा से हम भटकें नहीं, यह ध्यान रखें।

मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।

– वेदप्रिय शास्त्री

धर्म

जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन, पक्षपात रहित न्याय, सर्वहित करना है। जो कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिये एक और मानने योग्य है, उसको **धर्म** कहते हैं।

– महर्षि दयानन्द सरस्वती

हम कैसे उपचार करें

उन लोगों का भला बताओ,हम कैसे उपचार करें,
जीवन से जो वैमनस्यता, और मौत से प्यार करें।।

गंगा समझ डुबकियां लेते, जो जन गन्दे नाले में,
जिन्हें नहीं भाता है किंचित, रहना सूर्य उजाले में।
षट् रस व्यंजन समझ, गन्दगी का निशि–दिन आहार करें।। उन लोगों का....

बैठे हैं जिस डाल पे,उस पर ही चल रही कुल्हाड़ी है,
समझाने वाले को कहते, मूरख और अनाड़ी है।
समझ पराया अपनों के,ऊपर ही अत्याचार करें।।
उन लोगों का....

अपनापन कुछ भी है न,लेकिन फिर भी अपने बनते हैं,
सदा हमारे सर्वनाश के,जाल जो छुप–छुप बुनते हैं,
कैसे इनको इनकारें और कैसे अंगीकार करें।।
उन लोगों का....

जिन्हें चांदनी रात न प्यारी, जो कि दीप के दुश्मन हैं,
बस्ती से वीरान भले, और बूचड़खाने उपवन हैं।
कोयल और रसाल छोड़ जो, काक आक सत्कार करें।। उन लोगों का....

धर्म मान बैठे हैं अपना,जो कि जरायम पेशे को,
और कफन बुनने के काम में, लेते रेशम रेशे को।
जो व्यभिचार बलात्कार, अथवा अवैध व्यापार करें।।
उन लोगों का....

जो निशंक आतंक करें, धरती की लाज उतार रहे,
मानसरोवर के हंसों को, चुन–चुन बगुले मार रहे।
किस महास्र से या कि शास्त्र से,इनका सफल सुधार करें।। उन लोगों का....

मानवता रोती निरीह सी, पिटती नित बदमाशों से,
कौन बचाएगा अब इसकी,अस्मत लक्ष्मीदासों से।
'वेदप्रिय' के साथ सभी मिल, इस पर आज विचार करें।। उन उन लोगों का....

– वेदप्रिय शास्त्री
सीताबाड़ी, केलवाड़ा

मोहनजोदड़ो, हड़प्पा, सिन्धुघाटी और वैदिक सभ्यता : देशी–विदेशी विद्वानों की दृष्टि, तथ्य व तर्क

– अखिलेश आर्येन्दु

पादरियों, विदेशी इतिहासकारों, वामपंथी इतिहासकारों के अतिरिक्त अन्य विचार धाराओं से प्रभावित इतिहासकारों व अन्वेषकों ने सभ्यताओं के सम्बंध में जो लिखा, बताया, प्रस्तुत किया और स्थापित करने का प्रयास किया, वह आज की पीढ़ी के लिए मानक बन गया है। इसके बावजूद अनेक इतिहासकारों, गवेषकों, पुरातत्व वेत्ताओं और विद्वानों ने इस सम्बंध में अपनी निष्पक्ष खोज नहीं छोड़ी। यही कारण है कि हड़प्पा, सिन्धु घाटी और अन्य सभ्यताओं के तह तक जाने वाले अनेक गवेषक महानुभावों ने इतिहास में स्थापित इस संदर्भ को नए रूप में तथ्यों और प्रमाणों के साथ प्रस्तुत करने की कोशिश की। इसमें पं. भगवद्दत्त, स्वामी विद्यानंद सरस्वती और पं. रघुनंदन शर्मा का नाम उल्लेखनीय है। विदेशी और वामपंथी इतिहासकारों और पुरातत्त्व वेत्ताओं ने जिस तरह से सभ्यताओं का इतिहास प्रस्तुत किया है उससे किसी सर्वमान्य और तर्कसंगत परिणाम पर नहीं पहुँचा जा सकता है। लेकिन विडम्बना यह है कि इतिहास की सभी पुस्तकों में पादरी, अंग्रेज और वामपंथी इतिहासकारों के द्वारा लिखे इतिहास को ही मानक मानकर उसे इतिहास के रूप में पढ़ाया ही नहीं जा रहा है बल्कि इतिहास के शोध छात्र–छात्राओं के शोध के विषय के रूप में सम्मिलित किया जाता रहा है। उपरोक्त तीनों सभ्यताओं पर आज तक जितने भी अनुसंधान और शोध किए गए हैं वे उन विचारों और मापदंडों से ऊपर उठ नहीं पाए हैं जो विदेशी इतिहासकारों और वामपंथी पुरातत्त्व शास्त्रियों व इतिहासकारों ने निर्धारित किए। 'आर्य बाहर से आए' की कल्पना, झूठ और शरारत को सभ्यताओं के खोज के बाद भी बनाए रखा गया। इसका परिणाम यह हुआ है कि सत्य, तर्क, तथ्य, प्रमाण और मौलिक व नवीन तर्कों, तथ्यों और प्रमाणों को अस्वीकार की सीमा तक ले जाया गया। भारत की राजनैतिक स्वतंत्रता के पिछले 70 वर्षों में इतिहास ही नहीं भाषा, साहित्य और धर्म के मामले में तथाकथित शिक्षा और मीडिया के माध्यम से लोगों को तथ्यपरक, सत्य और विज्ञान परक जानकारी नहीं दी गई। प्रत्येक विषय और क्षेत्र को विदेशी मापदंड, दृष्टिकोण और प्रमाण के आधार पर तौलने की परम्परा बनाई गई। आज स्थिति यह हो गई है कि कोई भी विषय, क्षेत्र और तथ्य–प्रमाण को तौलने के लिए विदेशी विद्वानों और अनुसंधानों को ही मापदंड के रूप में निर्धारित किया जाने लगा है। ऐसे में क्या निष्पक्षता की गारंटी दी जा सकती है? एक बहुत बड़ा प्रश्न है। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, सिन्धु और वैदिक सभ्यता के सम्बंध में भी ऐसा ही दृष्टिकोण अपनाया जाता है। और भारतीय मापदंड के रूप में वामपंथी या दक्षिणपंथी दृष्टिकोण को। निष्पक्ष दृष्टिकोण और प्रमाणों को 'प्रमाण' के रूप में प्रस्तुत करने की स्वस्थ परम्परा को तिलांजलि देदी गई। जिज्ञासु और खोजी प्रवृति के लोगों को भी हतोत्साहित किया गया। इससे संकल्प और इच्छा–शक्ति ही समाप्त हो गई है। उपरोक्त तीनों सभ्यताओं के विषय में किस तरह के दृष्टिकोण, तथ्य और प्रमाण प्रस्तुत किए जा चुके हैं, आइए, इसकी समीक्षा करें। आप को यह अंक कैसा लगा, अपनी बेवाक राय से अवश्य अवगत कराएं।

– समन्वय सम्पादक

प्राचीन भारतीय इतिहास के साधन

भारतीय और विश्व के अन्य देशों के इतिहास में अंतर समझकर हम भारतीय इतिहास की रूप–रेखा की झलक पा सकते हैं। लेकिन सामान्यता इस अंतर को न हम जानते हैं और न ही समझने का प्रयास ही करते हैं। यही कारण है कि विदेशी और वामपंथी इतिहासकारों ने भारत के इतिहास को जिस रूप में लिख दिया उसे हमने 'अंतिम सत्य' मानकर स्वीकार कर लिया। हम सभी जानते हैं इतिहास का विषय मृत अतीत है और इनका सम्बंध उन घटनाओं से है, जो घट चुकी हैं। इस अतीत के अध्ययन के लिए

उपलब्ध सामग्री का आश्रय लेना पड़ता है। अन्य देशों की अपेक्षा भारतीय इतिहास के प्राचीन काल के अध्ययन के लिए जो सामग्री इसके लिए निर्धारित की गई है वह उपलब्ध नहीं है। पुराण, महाकाव्य और ब्राह्मण ग्रंथ ही इसके मुख्य स्रोत बताए जाते हैं। यही कारण है विदेशी विद्वानों ने यह कहना शुरू कर दिया कि प्राचीन भारत में इतिहास और तत्सम्बंधी ज्ञान का सर्वथा अभाव था। लेकिन विदेशी विद्वान यह भूल जाते हैं कि भारत का इतिहास मौलिक तत्त्वों एवं सिद्धांतों का इतिहास है, भौतिक घटनाओं का नहीं। यदि पाश्चात्य विद्वान इन आधारभूत तत्त्वों को समझने का प्रयास करते, तो वे प्राचीन भारतीयों को इतिहास–बुद्धि–विहीन कभी नही कहते। यदि भारत की प्राचीन ज्ञान–सम्पदा, तत्त्व–सम्पदा, धर्म–सम्पदा एवं साहित्य–सम्पदा का अवलोकन करें तो हम पाते हैं कि इतिहास के अध्ययन के लिए वैदिक साहित्य, महाकाव्य, पुराण, संस्कृत भाषा में लिखे ग्रंथ, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, प्राकृत भाषा में लिखे ग्रंथ, इतिवृत, आख्यायिका उदाहरण, पाली के ग्रंथ, अपभ्रंश में लिखे ग्रंथ, अप्रकाशित पांडुलिपियाँ, अभिलेख, मुद्राएं और प्राचीन भग्नावशेष प्रचुर रूप में उपलब्ध हैं। इसके बावजूद विदेशियों द्वारा भारतीयों को इतिहास से रहित कहना, दुराग्रह और द्वेष नही ंतो क्या है?

सामान्यता भारतीय इतिहास जानने और समझने के लिए निम्न तरह की सामग्री का उपयोग किया जाता रहा है। जिसमें 1–पुरातत्त्व, 2–साहित्य और अनुश्रुति एवं समकालीन ग्रंथ, 3– विदेशी लेखकों और यात्रियों का वर्णन।

1. पुरातत्त्व– इसके अंतर्गत उत्खनन से प्राप्त सामग्री, मुद्रा, प्राचीन भवन तथा मंदिर, अभिलेख आदि सम्मिलित किए जाते हैं।

2. साहित्य और अनुश्रुति एवं समकालीन ग्रंथ–इसमें हिन्दू साहित्य, बौद्ध साहित्य और जैन साहित्य, इतिहास ग्रंथों का अध्ययन किया जाता है।

3. विदेशी लेखकों और यात्रियों के वर्णन–भारत भ्रमण के लिए आए विदेशी यात्रियों द्वारा लिखे संस्मरण, यात्रा–वर्णन और राजकाज के सम्बंध में लिखी सामग्री सम्मिलित की जाती है।

इतिहास के साधनों के सम्बंध में जानने के बाद अब हम इतिहास से सम्बन्धित उन बातों पर ध्यान क्रेंद्रित करेंगे जो भारतीय इतिहास को गहराई से प्रभावित करती हैं। लेकिन इसके पहले यह जान लेना आवश्यक है, इतिहास लेखन करने वाले लेखकों का (इतिहासकार) भारत के सम्बंध में दृष्टिकोण किस प्रकार का रहा है। वे भारत को किस दृष्टिकोण से देखते हैं और उनको भारत की सभ्यता, संस्कृति, धर्म, भाषा, अध्यात्म, समाज, आचार–विचार और ज्ञान–विज्ञान के सम्बंध में कितनी समझ है। ध्यान रहे, जिन विदेशी विद्वानों, इतिहासकारों, भाषाविदों, याात्रियों और अनुसंधान कर्ताओं ने भारतीय संभ्यता, संकृति, धर्म, ज्ञान–विज्ञान, भाषा और समाज को स्वस्थ्य दृष्टिकोण से देखने–समझने का प्रयास किया उन्होंने वेद सहित अनेक ज्ञान के ग्रंथों को विश्व का ज्ञान–भण्डार कहने और मानने में कोई संकोच नहीं किया, लेकिन जिनकी दृष्टि स्वार्थ, दुराग्रह, आग्रह, द्वेष और पक्षपात पूर्ण रही उन्होंने जो भी लिखा वह नितांत स्वार्थपूर्ण, पक्षपातयुक्त, द्वेषपूर्ण और भारत को मूर्ख देश साबित करने की दृष्टि से लिखा। ज्ञातव्य है भारत का इतिहास ऐसे दुराग्रहियों, स्वार्थियों, द्वेषियों और पक्षपातियों का लिखा इतिहास है जो पिछले 70 वर्षों से हम इतिहास की पुस्तकों में पढ़ते आ रहे हैं। जिसमें कल्पना, शरारत, द्वेष और झूठ की भरमार है। इस विषय में बाद मैं चर्चा करूंगा। इस अंक में हड़प्पा, मोहनजोदड़ो सिन्धु और वैदिक सभ्यता के सम्बंध में तर्कसंगत एवं तथ्ययुक्त लेखन पर विचार किया जाएगा।

सभ्यताओं की समीक्षा

भारतीय इतिहास की पुस्तकों में जिन सभ्यताओं के सम्बंध में वर्णन किया गया है उनमें हड़प्पा, मोहनजोदड़ों, सिन्धुघाटी और वैदिक सभ्यता प्रमुख हैं। लेकिन जो इन सभ्यताओं के सम्बंध में पढ़ाया जाता है वह इतना भ्रमित करने वाला, तर्कहीन और तथ्यहीन है जिस पर कोई भी विचारवान और गवेषक व्यक्ति विश्वास नहीं कर सकता। इन सभ्यताओं के भग्नावशेषों से भारतीय आर्य सभ्यता की उत्कृष्टता और विकास की जानकारी मिलती है। लेकिन इनका जो काल निर्धारित किया गया उसके बारे में इतना मतभेद है कि वास्तविकता और सत्य को समझना असम्भव हो जाता है। इतिहास की पुस्तकों में जिन विकसित सभ्यताओं का वर्णन किया गया है, उनकी वास्तविकता के सम्बंध में निष्पक्ष पड़ताल करना आवश्यक है। इस लिए सबसे

पहले उन बिंदुओं पर हम चर्चा करेंगे जो सभ्यताओं की वास्तविकताओं से हमें साक्षात्कार करा सकें।

उदाहरण भारत की स्वतंत्रता के पूर्व भारत का जो इतिहास लिखा मिलता है उसमें माहनजोदड़ों, हड़प्पा सभ्यता और सिंधुघाटी की सभ्यता के विषय में वर्णन अंग्रेज इतिहासकारों के माध्यम से मिलता है। कुछ भारतीय इतिहासकार जो अंग्रेजों के साथ मिलकर कार्य करते थे या उनके कार्यों को सराहते थे ने भी सभ्यताओं के बारे में अपना अभिमत प्रकट किया, लेकिन उनमें तथ्य, प्रमाण, सत्य और वास्तविकता कितनी है कहना मुश्किल है। उदाहरण के रूप में एक शताब्दी पूर्व सिंधुघाटी की सभ्यता के सम्बंध में कोई नहीं जानता था, लेकिन हड़प्पा और मोहनजोदड़ों नामक स्थानों पर खुदाइयों के बाद सिंधुघाटी सभ्यता के रूप में एक नई सभ्यता की चर्चा होने लगी। खुदाई करने के पीछे अंग्रेजों का इतिहास सम्बंधी षड्यंत्र करने का वह स्वार्थ था जिससे वह साबित कर सकें पश्चिमी सभ्यताएं इन सभ्यताओं के वनस्पति अधिक विकसित और उससे बहुत पहले की हैं। यानी हड़प्पा या वैदिक सभ्यता सबसे प्राचीन सभ्यताएं नहीं हैं और वह उतनी विकसित भी नहीं थीं जितनी अन्य पश्चिमी देशों की सभ्यताएं विकसित थीं। भारतीय इतिहास में पढ़ाया जाता है कि हड़प्पा और मोहनजोदड़ों सभ्यताओं से सम्बंधित लोग (निवासी) बाहर से आकर इस देश में अपना उपनिवेश स्थापित किया था। उस प्राचीनकाल के जो अवशेष मिलते हैं, वे कम से कम ईसा पूर्व 5 हजार वर्ष की स्मृति दिलाते हैं। परन्तु पाश्चात्य विद्वानों को यह बात पचती नहीं थी कि भारतीय संस्कृति किसी रूप में कैसे 5 हजार वर्ष से अधिक पुरानी हो सकती है। ज्ञातव्य है बाइबल में सृष्टि की उत्पत्ति मात्र छह हजार वर्ष की मानी गई है। फिर छह हजार वर्ष से पूर्व किसी विकसित सभ्यता के होने की बात पाश्चात्य जगत् कैसे स्वीकार कर सकता था। इसलिए भारतीय इतिहास को तोड़ने–मरोड़ने का कार्य उन्होंने शरारत और षड्यंत्र के तहत योजनाबद्ध रूप में किया। जिससे अंग्रेजी सभ्यता को विश्व में सबसे विकसित और आदर्श सभ्यता के रूप में स्थापित की जा सके।

इस तथ्य और सत्य को बहुत कम लोग जानते और मानते हैं कि पुरातत्त्व जो इतिहास प्रमाण का सबसे सशक्त पक्ष पाना जाता है के बारे में जो आकलन, समीक्षाएं और अनुसंधान प्रस्तुत किए जाते हैं वे सर्वस्वीकृति से युक्त नहीं होते। पाश्चात्य जगत्, वामपंथी और परम्परागत इतिहास लेखकों की दृष्टि में अंतर दिखाई देता है। इसलिए सामान्य इतिहास का विद्यार्थी और इतिहास जानने का जिज्ञासु व्यक्ति यह समझ ही नहीं पाता कि इतिहास में वह जो भी पढ़ रहा है, वह कितना निष्पक्ष और सत्य पर आधारित है। मैं भी इतिहास का स्वाध्यायी और विद्यार्थी रहा हूं। लेकिन पाठ्य पुस्तकों में लिखे इतिहास के सम्बंध में यह कभी नहीं समझ पाया कि इसमें इतिहास कितना है, शरारत, झूठ और कल्पना कितनी है। आज भी स्थिति लगभग वैसी ही है। इतिहास का जिज्ञासु कोई भी छोटा–बड़ा व्यक्ति जो इतिहास को उपाधि या नौकरी पाने के लिए पढ़ता है वह इतिहास के एक भी शब्द पर कोई चिंतन नहीं करता। यही कारण है कि अंग्रेजों द्वारा लिखे कल्पना और झूठ आधारित इतिहास को लेकर कोई आंदोलन स्वतंत्रता के बाद नहीं हुआ। मोहनजोदड़ों और हड़प्पा सभ्यताओं को इतिहास में जिस रूप में पढ़ाया जाता है वह इतिहास के नियमों और सिद्धांतों के कितना अनुरूप है, इस पर कोई चिंतन शायद ही समग्र रूप से आज तक हुआ हो। इस इतिहास ने भारतीय समाज, विशेषकर हिंदुओं में वर्गभेद और जातिभेद पैदाकर गुमराह और भ्रमित करने का कार्य ही किया है। इस पर चिंतन की बहुत आवश्यकता है। अब देखें मोहनजोदड़ो और हड़प्पा व सिंधुघाटी की सभ्यता के पीछे के तथ्य, प्रमाण और इतिहास के आधार क्या हैं?

इतिहास के किसी भी ग्रंथ में सिंध में मोहन नाम का राजा होने का कोई वर्णन नहीं मिलता है। फिर किस आधार पर मोहनजोदडो सभ्यता का नाम पड़ा? सबसे पहले इस पर विचार कर लेते हैं।

सिंधी में मरे हुए लोगों को 'मुअनि' (पंजाबी में मोया) कहते हैं। 'दड़ो' का अर्थ टीला है। इस प्रकार प्रारम्भ में इसका नाम 'मुअनि' (मरे हुए लोगों) 'जो' (का) 'दड़ो' (टीला) ='मुअनि जो दड़ो' रहा होगा। असिंधी लोग में उच्चारण भेद से 'मुअनि' को मोहन समझा गया फिर उसका शुद्ध उच्चारण के रूप में 'मोहनजोदड़ो बनाया गया। कहने का तात्पर्य यह है एक विशेष स्थान पर जिस सभ्यता के अवशेष प्राप्त हुए उसे उसके स्थान के नाम से जाना और माना गया। आज मोहनजोदड़ो का स्थान सिंध के लड़काना (लड़कानो) जनपद के डोकरी

रेलवे स्टेशन से लगभग सात–आठ मील की दूरी पर स्थित है। इस अवशेष की खुदाई सन् 1922 से आरम्भ होकर 1927 तक चली। उत्खनन में प्राप्त वस्तुओं के चित्रों सहित इसका विवरण भारत सरकार की ओर से Annual Report of the Archaeogical Survey of India में प्रकाशित होता रहा। इसमें अनेक विवरण खुदाई के प्रकाशित होते रहे। बाद में लंदन से M/S Arthur Polesthain नामक फर्म ने तीन खंडों में प्रकाशित किया। इस ग्रंथ का नाम था–Mohenjodaro and the Indus Civilisation । बाद में फिर इस जगह पर खुदाई हुई जिसका सारा विवरण भारत सरकार की ओर से बड़ी–बड़ी जिल्दों में प्रकाशित हुआ। जनसाधारण को अब तक मोहनजोदडों के बारे में कोई जानकारी नहीं थी, लेकिन ग्रंथ के प्रकाशित होते और लंदन में सर जॉन मारशल द्वारा लंदन के साप्तिाहिक पत्र 'Illustrated London News' में इस सम्बंध में लेख प्रकाशित होते ही पाश्चात्य जगत् में हलचल मच गई। जो पाश्चात्य जगत् भारत को गंवार, पिछड़ा और असभ्य देश के रूप में मानता था वह हैरान और परेशान हो गया। क्योंकि इस उत्खखन के बाद पश्चिमी दुनिया को भारत को पिछड़ा बताने का कोई कारण नहीं दिखाई पड़ा। वास्तव में इस देश की मिट्‌टी से विकसित और उन्नति की पराकाष्ठा को प्राप्त संस्कृति को देखकर पश्चिमी दुनिया के लोगों को आश्चर्य में पड़ना स्वाभाविक था।

इस उत्खनन ने पश्चिमी दुनिया को यह सोचने पर विवश कर दिया कि भारत की सभ्यता उसकाल की है जब बाइबल इस धरती पर नहीं आया था। पश्चिम को इस उत्खनन से यह मानने पर विवश होना पड़ा कि मोहनजोदड़ो वाले कोई सामान्य जन नहीं थे बल्कि आर्य ही थे, जिसके सम्बंध में पश्चिमी विद्वानों और पादरियों ने काल्पनिक कहानियां गढ़ ली थीं। फिर वह कल्पना और शरारत भी सामने आ गई जो अंग्रेजों ने आर्यों के बारे में मनमाने ढंग से गढ़ ली थी कि आर्य ईरान या मध्य एशिया से आकर यहाँ के तथाकथित मूल निवासियों को हराकर यहाँ की धरती पर बलात अधिकार कर लिया था। मेरे विचार से अंग्रेजों ने उस समय तक भरसक कोशिश जरूर की होगी कि भारत में किए गए उत्खननों से यह साबित न हो सके कि भारत में लाखों वर्ष पूर्व एक ऐसी महान् सभ्यता अपने सबसे विकसित रूप में थी, जिसकी कल्पना तक पश्चिम में कोई नहीं करता था।

मोहनजोदड़ो सभ्यता के पुरातात्विक अवशेषों से जो तथ्य व प्रमाण एक विकसित सभ्यता के बारे में पता चला उस पर अब यह संदेह भी निराधार हो गया कि भारत को गंवार–पिछड़ा कहकर विश्व समाज को अधिक दिनों तक अंधेरे में नहीं रखा जा सकता है।

मोहनजोदड़ो की खुदाई के बाद यह प्रश्न उठा कि यह विकसित सभ्यता जो भारत में कभी थी क्या 'आर्यों' की थी? या अन्य लोगों की? यदि अन्य लोगों की थी तो उनकी भाषा, धर्म ग्रंथ, समाज, उनकी कद–काठी और वैचाारिक पृष्ठभूमि कैसी थी? किसी सभ्यता के सभी पक्षों, विषयों और अवशेषों पर विचार करना और उसके सम्बंध में विश्व समाज को अवगत कराना किसी सत्य संकल्पी पुरातत्ववेत्ता के माध्यम से ही हो सकता है।

अगले अंक में इसके आगे की विवेचना करूंगा।

****

न दुर्गतोऽस्मीति कारोत्यकार्यं तमार्यशीलं परमाहरार्यः

– महाभारत • उद्योगपर्व ३३.१.१२

विपदाएँ झेलता हुआ भी जो अकार्य नहीं करता उसी को, केवल उसी को आर्यपुरुष आर्यशील कहते हैं।

HISTROY BELONGS TO KSHATRIYAS

– Dr. Roop Chandra 'Deepak'
Lucknow (U.P.)
Mob. 9839181690

History in general includes all activities of humanity covering all sections of people and all departments of the state. But in particular history speaks of the fights, victories and consequent changes made by the successors. That way history in fact belongs to the Kshatriyas.

Let us first talk about the Samudra-Manthan. The human mind is like a sea - broad, deep and full of varieties. It has good and bad thoughts, and witnesses a continuous struggle between opposite thoughts. This is the real Samudra-Manthan. After the struggle, man finds right and good inferences and the best discretion. These are the said Ratnas or gems, and the nectar. But people developed a story out of this, that there were noble and bad persons fighting for nectar. They put a mountain into the sea, rolled up a snake round the mountain, stirred the sea, and found many Ratnas or gems and at last the nectan. This story came out to be a history of Devas (the noble warriors) and Daityas (the bad warriors) or in other words, a history of Kshatriyas.

Another piece of spiritual knowledge is about Ahalya. Ahalya means night. The night passes together with the moon (Gotam in Sanskrit). The exit of the moon and entry of the sun coincide with each other. When the moon is out, the sun (Indra) governs the night. This is a formula, but people have developed astory out of it. They say that when Gotam was out, Indra raped his wife Ahalya. In this manner, it also became a history of Indra, or the king, or a Kshatriya.

The oldest book on History is the Ramayana. The book comprises stories about several Rishis, yajnas, marriages, journeys, worships, mountains and rivers. But mainly it is the story of king Rama, his kingship, stealing away of his wife Sita by Ravana, his battles with many opponents and finally Rama's victory over Ravana. The uneducated people call Ravana a Brahmin; but the educated call him a Kshatriya. Rama was certainly a Kshatriya. This way the Ramayana is also a history of Kshatriyas.

Let us look at the contents of another History book, the Mahabharata. They are: Vidur's advices to Dhritrashtra; qualities of the learned; education of Krishna at Sandipani's; Rishis Markandeya, Lomash, Dhaumya, Vyas and Parashar; Agastya and Lopamudra; Dadhichi and his asceticism; discussion of Ashtavakra; system of four Varnas; system of four Ashramas; Necessity of a noble & learned Purohit; the good & bad Brahmins; features of a Republic; service to mother, father & teacher; analysis of truth & untruth; definition of dharma; the dharma, artha, kama & moksha; sins & their atonement; theexistence & eternality of soul, etc. But in short the epic Mahabharta is called the history of Kauravas & Pandavas, the two sections of a Kshatriya family.

The Holi and Deepawali are two crop-festivals of Indian society. When the wheat crop is harvested in a new summer seasion, then Holi is celebrated. In the same way, when the rice crop is harvested in a new winter season, the Deepawali is celebrated. People have created two imaginary stories that Holi is celebrated due to the burning of a woman named Holika, and Deepawali is celebrated on the day of Rama's coming back to Ayodhya. Thus here too. The crop-festivals have been presented as history of two Kshatriya families.

India from Buddha to Gandhi is not narrated as a history of Gautam the Buddha, Mahavira the Jain, Rishi Panini, Katyayana, Patanjali, Kumaril Bhatt, Prabhakar the guru, Swami Shankaracharya, Sant Jnaneshwara, Sant Namdeva, Amir Khusro, Sant Kabir, Guru Nanak, Chaitanya Mahaprabhu, Sant Eknath, Sant Mirabai, Bhakt Suradas, Goswami Tulsidas, Samarth Ramdas, Swami Virajanand, Rishi Dayanand, Swami Ramkrishna Paramhansa, Swami Vivekanand, Mahatma Gandhi, etc. It is rather narratedas a History of Bimbisara, Nanda dynasty, Maurya dynesty, the Sungas, Kanishka, Gupta dynasty, the Vardhans, the Chauhans, foreign invasions, British power, battles of Panipat, the Sikh war, etc. Here as well, we find that history belongs to the fighting and victorious persons.

China and India are two neighbouring countries, having several things in common and contrast. Both the countries have hundreds of scholars of all subjects. But any discussion or knowledge-war has seldom taken place between them as a main issue of History. All military wars have essentially found places in the History of both nations. In other words, the activities of warring forces i.e. the Kshatriyas, is the main content of History.

Let us reiterate that the actual Indian society is categorised into four varnas, viz, Brahmin, Kshatriya, Vaishya and the Fourth. In the running or propelling of the

nation, all the four varnas have, more or less, an equal part to contribute. Their combined subjects are agriculture, medicines,music,engineering, economics, commerce, education, science, sculplture, weaving, pottery, games, plays, arts, espionage, animal-husbandry, etc. The list contains subjects in which the first, third or fourth varna contributes most. But history is the subject where in the second varna has the leading role to play, as History belongs to the Kshatriyas.

****

शुभ विचार जीवन, समाज और प्रकृति को सर्वोत्तम बनाते हैं

सबेरे का सूर्य किसी के लिए प्रेरणा और ज्ञान का स्रोत है तो किसी चमगादड़ के लिए मुसीबत। उसे (चमगादड़ के लिए) तो अँधेरी रात ही पसंद है। चन्द्रमा का शीतल प्रकाश सुहागिन के लिए आनंद का स्रोत है तो विरहणी के लिए ईर्ष्या की वस्तु। वैज्ञानिक सूर्य के प्रकाश से सौर ऊर्जा का संचय करते हैं तो कृषक खेती के लिए वरदान मानते हैं और रोजाना सूर्य निकलने का इंतज़ार करते हैं। कृषि को जीवन सूर्य से ही मिलता है। लेकिन जून की दोपहरी के सूनसान में राहगीर के लिए तो यही सूर्य मुसीबत बन जाता है। यदि उसी सूर्य को सकारात्मक ढंग से सभी देखने लगें, तो सबके लिए वह फलदायी हो सकता है।

रोज़ाना एक अच्छाई ग्रहण करने और एक बुराई छोड़ने का संकल्प करिए। कुछ ही दिन में आप देखेंगे जीवन में चारों ओर सकारात्मकता का सूर्य उदय हो गया है, जो स्वयं को ही नहीं समाज को भी अपने उज्ज्वल प्रकाश से प्रकाशित कर रहा है। दुर्गुणी लोग भी प्रेरणा लेने लगें हैं और अच्छा इंसान बनने के लिए प्रेरित हो रहे हैं। जीवन का स्वयं निर्मित आदर्श, अपना बनाया हुआ उत्तम व मौलिक मार्ग और उत्तम विचार स्वयं को ही शिखर पर नहीं पहुँचाते हैं अपितु समाज के लिए भी प्रेरणास्रोत बनते हैं।

जिस तरह से वैज्ञानिक और समाज सुधारक हर समय नई–नई खोजों के द्वारा मानवता को अपना अमूल्य अवदान समर्पित करते रहते हैं उसी तरह से यदि समय, धन और शक्ति का उपयोग करके अच्छाइयों की खोज में लग जाएँ तो जीवन अच्छाइयों का पुस्तकालय बन जाएगा। रोजाना रोने धोने वाला, प्रत्येक बात और कार्य में दोष निकालने वाला व्यक्ति कभी उन्नति के रास्ते पर आगे नहीं बढ़ सकता है और लोगों की नज़र में वह कभी अच्छा भी नहीं बन पाता। जाहिरतौर सत्य, विनम्र और हितकारी वचन बोलने वाले व्यक्तियों को वे भी पसंद करते हैं जो झूठ और कपटी होते हैं। झूठ और कपट से कोई व्यक्ति समग्रता में विकास नहीं कर सकता। कुछ दिन भले ही वह समाज की दृष्टि में 'बड़ा आदमी' बना रहे, लेकिन जैसे ही समाज को उसकी सच्चाई मालुम होती हैं, लोग उससे दूरी बनाने लगते हैं।

ऐसे बहुत से लोग मिल जाएँगे जो गप्प, झूठ, फ़रेब और मिठास के लबादा ओढ़कर लोगों से वाहवाही लूटते रहते हैं। लेकिन, यह वाहवाही बहुत दिनों तक टिकाऊ नहीं होती है। कम बोलना, अच्छा बोलना, सच बोलना, सर्वहितकारी बोलना और विनम्रता के साथ बोलना तो ठीक है साथ में उसे कार्य–व्यवहार में लाना, उससे भी अच्छा होता है।

श्रम से उपार्जित खावें, अकेले न खावें।

– पंडित गंगाप्रसाद उपाध्याय

मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी।।

(ऋग्वेद १०–११७–६, तैत्तिरीय ब्राह्मण २८–८–३, निरुक्त ७/३)

अन्वय :– अप्रेचताः मोघं अन्नं विन्दते। स तस्य वध इत्। स आर्यमरणं न पुष्यति। न स सखायां पुष्यति। केवलादी केवलाघः भवति। इति अहं सत्यं ब्रवीमि।।

अर्थ – (अप्रचेताः) बुद्धि शून्य अर्थात् मूर्ख आदमी (मोघ अन्नं) मुफ्त का भोजन, बिना कमाया हुआ भोजन (विन्दते) पाने का यत्न करता है अर्थात् अपने भोजन के लिए कुछ करना नहीं चाहता। (स) उसका ऐसा व्यापार (तस्य) उसके (वधइत्) नाश का ही कारण है। (केवलादी) जो अकेला खाने वाला है वह (केवलाघः) केवल पाप का भागी (भवति) होता है। (सत्यं ब्रवीमि) मैं सत्य कहता हूँ अर्थात् इस कथन के सच होने में किंचन मात्र भी संदेह नहीं है।

व्याख्या :– जीवन के दो बड़े विभाग हैं। एक भोग और दूसरा कर्म। प्रश्न यह है कि इन दोनों का महत्व समान है अथवा एक गौण है और दूसरा मुख्य। यदि ऐसा है तो मुख्यकौन है और गौण कौन है ? तुलसीदास का कहना है कि –

कर्म प्रधान विश्व करि राखा।
जो जस करै सो तस फल चाखा।।

अर्थात् कर्म प्रधान है और भोग गौण। अब तनिक अपनी प्रवृत्तियों पर विचार कीजिये। आपका मन क्या गवाही देता है ? आपने एक घोड़ा मोल लिया। उससे कुछ काम लेंगे और कुछ उसे भोजन देंगे। उसे कुछ करना है और कुछ भोगना है। आपको सवारी देना उसका कर्म है, दाना घास खाना उसका भोग है। उन दोनों में से मुख्य कौन हैं और गौण कौन? आप चूंकि भोजन देते हैं इसलिए काम लेते हैं अथवा काम लेते हैं इसलिए भोजन देते हैं। आप की प्रथम भावना क्या थी और दूसरी भावना क्या हुई ? आप कहेंगे कि हमको घोड़े से काम लेना था। इसलिए हम को उसके खरीदने की इच्छा हुई। और क्योंकि बिना भोजन दिए काम लेना असम्भव है अतः उसको भोजन भी देते हैं। यदि बिना भोजन दिये आप काम ले सकते तो केवल उसके काम की ही परवाह करते, उसके खाने की नहीं। जो बेगार में काम कराते हैं वे जानते हैं कि बेगार वाला बिना भोजन के भी काम करने पर मजबूर होगा। इसलिये वह भोजन की परवाह नहीं करते। अतः सिद्ध हुआ कि कर्म मुख्य है और भोग गौण। आवश्यक होते हुये भी उसकी आवश्यकता को प्राथमिकता नहीं दी जा सकती।

इस सिद्धांत के विरुद्ध एक बात कही जा सकती है। प्रायः संसार में लोग भोग के लिए ही कर्म करते हैं। यदि भोग की आशा नहीं होती तो नहीं करते। एक चिकित्सक इसलिए चिकित्सा नहीं करता कि उसे चिकित्सा का ज्ञान या सामर्थ्य है अपितु इसलिए कि उससे आर्थिक लाभ होगा। एक वकील इसलिए वकालत नहीं करता कि वह वकालत के काम में दक्ष है अपितु इसलिए कि उसे पैसा मिलता है। इसलिए लोगों ने अर्थ को ही सर्वोपरि माना है। **सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ति।** कांचन का अर्थ है भोग।

यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो (अफलातून) ने अपने ग्रंथ रिपब्लिक (शासन तंत्र) में इस प्रश्न पर अच्छा प्रकाश डाला है। वह कहता है कि क्या एक अध्यापक इसलिए अध्यापक कहलाता है कि वह अध्यापन का कार्य करता है अथवा इसलिए कि वह अमुक वेतन पाता है। एक डॉक्टर को आप इसलिए डॉक्टर कहते हैं कि वह डॉक्टरी करता है अथवा इसलिए कि वह इतना धन कमाता है। एक सैनिक का सैनिक नाम उसके कर्म के कारण हुआ अथवा उसकी वेतन के कारण। यह तो ठीक है कि अध्यापक, वकील, सैनिक या डॉक्टर सब जीविका उपार्जन करते हैं और जीविका के लिये ही काम करते हैं। परन्तु यह बात तो सभी में सामान्य है। और यदि जीविका–उपार्जन को ही मुख्य माना जाय तो सब एक से होंगे, विशेषता न होगी। तथा हर एक का सम्मान उसकी आर्थिक मात्रा के अनुसार होना चाहिये। परन्तु

समाज का ऐसा नियम तो नहीं है। एक रोगी मनुष्य डॉक्टर की खोज करता है तो उसकी धनाढ्.यता को ना देख कर उसकी डॉक्टरी की योग्यता को देखता है। ऐसे डॉक्टर को बुलाओ जो डॉक्टरी अच्छी कर सके। यह प्रवृत्ति तुलसीदास के ऊपर के कथन को पुष्ट करती है कि न केवल 'विश्व' नामक परमात्मा ने ही अपितु विश्व मानव समाज ने कर्म को भोग पर प्रधानता दी है।

जब इतना निश्चित हो गया तो भोग को कर्म के आधीन रखना होगा, कर्म को भोग के अधीन नहीं। कर्म आधार है भोग आधेय है। आधेय बिना आधार के ठहर नहीं सकता। इसलिये वेदमंत्र कहता है मोघं अन्नं विन्दते अप्रचेताः अर्थात् मुफ्त का खाने की इच्छा करने वाला मूर्ख है। वह भोग को प्रथमता देता है। यह बात सृष्टि के नियम के विरुद्ध है। जिस अंधेरनगरी में टका सेर भाजी और टके सेर खाजा बिकता था वह नगरी पूरी अंधेरनगरी न थी। कुछ तो उजाला भी था। पूरी अंधेरनगरी वह होती जहां खाजा और भाजी मुफ्त मिला करती। और टका कमाने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। डॉक्टर डॉक्टरी सीखता भी इसलिए है कि उसे पूर्ण विश्वास है कि जिस भोग की उसे आकांक्षा है सृष्टिक्रम उसको कर्म पर प्रधानता नहीं देता। मूल्य तो उसी चीज का दिया जाता है जो मूल्यवान् हो। कपड़ा अपने मूल्य से बड़ा है। मूल्य का मूल्य भी कपड़े की अपेक्षा से है ना कि मूल्य की अपेक्षा से, इसलिए कर्म की प्रधानता है और कर्म की अवहेलना अथवा बिना कर्म के भोजन की इच्छा करना परले दर्जे की मूर्खता है। जिस पुरुष को थोड़ी सी भी बुद्धि है वह ऐसी मूर्खता कभी नहीं करेगा। संसार को काम प्यारा है चाम नहीं।

वेद मंत्र कहता है **''सत्यं ब्रवीमि''** इसका तात्पर्य यह है कि यह कोई छोटी बात नहीं है, जिसको सुनी–अनसुनी कर दिया जाय। मानव जीवन के विकास के लिए यह एक अत्यंत गंभीर बात है। मुफ्त भोजन खाने की इच्छा विश्वव्यापी और सांक्रमिक रोग है जिसने मानव जाति को सबसे अधिक पीड़ित किया है। हर नर नारी को इससे सतर्क रहने की आवश्यकता है। यह मीठा विष है जिसकी हानि को बुद्धिमान् मनुष्य ही सोच सकते हैं। **''वध इत् स तस्य''** जो इस रोग में फंस गया उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है। वह किसी प्रकार बच नहीं सकता।

इस कथन की तथ्यता पर थोड़ा सा विचार कीजिये। मुफ्त खाकर अपने ऊपर परीक्षण कर लीजिए अथवा दूसरे मुफ्तखोरों के जीवन का निरीक्षण कीजिये। कुदरत को यह अभीष्ट नहीं कि मुफ्तखोरों को रहने दे। थोड़ी देर के लिए सहन अवश्य करती है, वह भी उतना ही जितना हर पाप को। वह मनुष्य को अवसर देती है कि यदि वह स्वयं ही अपनी भूल का अनुभव करे और सुधर जाय तो अच्छा है। परन्तु इसमें दण्डविधान तो काम करता ही है। माता–पिता अपनी संतान की निर्बलताओं को यथाशक्ति तथा अत्यंत सहिष्णुता के साथ सहन करते हैं और बड़ी से बड़ी भूलों की उपेक्षा करते हैं। परन्तु निठल्ली संतान से वह भी तंग आ जाते हैं और उनका भी स्वभाविक प्रेम–तन्तु टूट जाता है। इसलिये मुफ्तखोरी से बड़ा कोई पाप नहीं। और सर्वथा नाश ही उस पाप का एकमात्र दण्ड या प्रायश्चित है। इसलिए वेदमंत्र ने कहा **– वधइत् स तस्य**। यहां **'इत्'** विशेष अर्थ है। मनुष्य की स्वार्थ सिद्धि भी तभी होती है जब वह दूसरों के हित की बात सोचता है। व्यवसाय जगत् पर दृष्टि डालिये। कोई व्यवसाय चल नहीं पाता जब तक उसका आधार परार्थ न हो। कपड़े का व्यापारी दूसरों के हित को दृष्टि में रखकर कपड़े बनाता है। हलवाई दूसरों की रुचि को देखकर मिठाईयां बनाता है। आप जितना परहित को दृष्टि में रखकर व्यापार करेंगे उसमें उतनी ही अधिक सफलता होगी। हर व्यवसाय के लिए प्रश्न रहता है कि उसके साफल्य के लिए बाजार (मार्केट) चाहिये। 'बाजार' का क्या अर्थ? यही न कि जिस वस्तु को आप अपने स्वार्थ का साधन बनाना चाहते हैं उसमें दूसरे मनुष्यों का कितना हित निहित है। इससे विदित होता है कि परोपकार आपका पहला कर्तव्य और ध्येय होना चाहिये।

परोपकार के दो रूप हैं। एक विनिमय अर्थात् जो आपके साथ जितनी भलाई करे उसका कम से कम उतना बदला तो तुम दे ही दो। दस रुपये की चीज पाकर उसको दस अवश्य दो। अर्थात् 'मोघ अन्न' की प्राप्ति मत करो। मत समझो कि चार रुपये में दस का माल मिल गया तो तुम लाभ में हो। यह मुफ्त के छः रुपये जिसको तुम लाभ समझते हो अंत में तुम्हारे

नाश का कारण सिद्ध होंगे। व्यवसाय में जिसको चालाकी और धोखाधड़ी कहा जाता है वह व्यवसाय की अवनति का कारण होता है। यदि सत्य के आधार पर समस्त जगत् की स्थिति है (**सत्येनोतभिता भूमिः –** ऋग्वेद १०–८५–१) तो व्यवसाय जो जगत् का ही एक छोटा सा अंश है असत्य पर कैसे टिक सकता है। कहते हैं कि व्यापार की सफलता के लिए साख चाहिये। साख का अर्थ ही यह है कि लोगों को विश्वास हो कि तुम दस रुपये में पूरे दस का माल देते हो। भारतवर्ष के प्राचीन ग्रंथों में तथा ऐतिहासिक और अर्ध–ऐतिहासिक उदाहरणों में सत्य की बड़ी महिमा गाई गई है, परन्तु दुर्भाग्यवश वह महिमा धर्म ग्रंथों और धर्म उपदेशों तक ही सीमित है। व्यावहारिक जीवन में उसका प्रयोग बहुत कम है। मैं यहां एक ही उदाहरण दूंगा। डर्बन में मुझे एक सुंदर कंबल दिया गया। उसमें फैक्ट्री की ओर से एक चिट लगी थी, उसमें लिखा था कि इस कंबल में साठ प्रतिशत ऊन है, शेष रूई है। यदि भारतीय फैक्टरी होती तो यह लिखा होता कि इसमें शत प्रतिशत ऊन है। प्रसिद्ध है कि लंदन का कुंजड़ा आपको स्पष्ट कह देगा कि अमुक सेव खट्टा है। क्या प्रयाग और काशी में भी ऐसे कुंजड़े मिलेंगे ? सुना है कि इंग्लैंड आदि देशों में पानी में दूध मिला कर बेचते हैं और स्पष्ट कहते हैं कि इतना दूध है और इतना पानी। क्योंकि पानी मिला दूध पचाने के लिए हल्का समझा जाता है। क्या भारत में कोई हलवाई ऐसा करेगा? क्या भारत के व्यवसाइयों को यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि ''**मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः**''।

परोपकार का दूसरा रूप हैं दान। जब आप मूल्य का विनिमय करते हैं तो पूरा बदला नहीं दे पाते। पूरे दाम चुकाने पर भी कुछ न कुछ रह जाता है। मनुष्य स्थूल रूप से तो दूसरों के परोपकार पर जीवित ही रहता है। परन्तु बहुत से परोक्ष, अदृश्य और सूक्ष्म रूप है, जिनका परिगणन कठिन होता है। जैसे आप किसी अंधेरी सड़क पर जा रहे हैं। किसी पास के मकान से विद्युत–दीपक की किरणें आ रही हैं। आप इनका मूल्य तो नहीं चुकाते, न मकान वाला आपसे विनिमय मांगता है। परन्तु आपको उससे लाभ अवश्य हुआ है। यहाँ दान का प्रश्न उठता है। यह परोक्ष लाभ भी मुफ्त खोरी होगी यदि आप दान नहीं देते इसलिए छांदोग्य उपनिषद् में धर्म के तीन कांडों का निरूपण करते समय पहले कांड में दान को भी शामिल किया है (**त्रयो धर्मस्कन्धाः यज्ञोऽध्ययनं दानमिति प्रथमः तपः एव**।) जो 'मोघ अन्न' के पाप से बचना चाहता है उसे दान देना चाहिये। क्योंकि आप के भोगों में दूसरों की देन है। इसका बदला दान से ही हो सकता है। आप का दान सृष्टि के सूक्ष्म नियमों द्वारा उन तक भी पहुंच जाता है जो आपसे अपने उपकारों का मूल्य नहीं मांगते। जो दान नहीं देता उसके लिए वेद कहता है कि वह (**न अर्यमणं पुष्यति न सखायं पुष्यति**) अर्थात् वह अपने किसी हितेषी का पोषण नहीं करता। अर्यमा का अर्थ है परम स्नेही (Bosom friend देखो मोनियर विलियम्स की संस्कृत डिक्शनरी)। 'सखा' का अर्थ है 'साथी' या ''हम–पेशा'' एक ही काम करने वाले।

अंत में वेदमंत्र ने दान न देने वाले की घोर निंदा की है। केवलाघो भवति केवलादी जो अकेला खाता है उसके पास अंत में 'पाप' के सिवाय कुछ शेष नहीं रहता। अर्थात् उसके समस्त पुण्य क्षीण हो जाते हैं। जब पुण्य क्षीण हो गए तो सुख किसका मिले ? पुण्य के क्षीण होते ही सुखों का भी क्षय हो जाता है।

अंग्रेजी में एक कहावत है –दान धन का नमक है। (Charity is the salt of riches)। अंग्रेजी शब्द साल्ट का अर्थ है नमक। नमक का अर्थ है फलों को सुरक्षित रखने का साधन। जैसे यदि आप नींबू या आम को कई महीनों सुरक्षित रखना चाहे तो उसमें नमक मिलाकर रखें। नींबू या आम बिगड़ेगा नहीं। इसी प्रकार आप यदि अपने धन की रक्षा करना चाहते हैं तो दान देते रहिये। दान से धन घटता नहीं, बढ़ता है। दान उभयपक्षी हित है। हमसे दान पाने वाले का तो हित होता ही है, दान देने वाले का उससे कम हित नहीं होता। इसीलिए यास्काचार्य ने दान देने वाले को 'देव' संज्ञा दी है ('**देवो दानाद् वा') दान दाता देव है। जो दान नहीं देता वह अदेव या असुर है। "केवलाघ" है।** स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में तैत्तरीय उपनिषद् का दान की महिमा में एक सुंदर उद्धरण दिया है –

''श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम्। ''श्री स्वामीजी इसका अर्थ देते हैं श्रद्धा से देना, अश्रद्धा से देना,

शोभा से देना, लज्जा से देना, भय से देना और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिये।'' (तैत्तरीय प्रपाठक ७ अनुवाक ११, सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ३)

अश्रद्धा और लज्जा से भी देने पर क्यों बल दिया गया? इसका तात्पर्य है कि कभी–कभी सात्विक भावनाओं की कमी होने पर यदि मनुष्य किसी पाप की प्रवृत्ति में फँसने लगता है तो समाज का भय उसे दल–दल में फिसलने से बचा लेता है। और कालान्तर में उसकी सतोगुणी प्रवृत्ति लौट आती है। डूबते को तिनके का सहारा। अश्रद्धा से देते–देते भी श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। अश्रद्धा और लज्जा से दिया हुआ दान भी दूसरों के उपकार में लगता ही है।

अथर्ववेद में अतिथि–सत्कार के सम्बन्ध में बहुत अच्छा उपदेश है जो 'केवलादी' के दोष का निरूपण करता है: –

इष्टं च वा एष पूर्तं च गृहाणामश्नाति यः
पूर्वोऽतिथेरश्नाति।

– अथर्ववेद ९–६–१

अर्थात् जो गृहस्थ अतिथि को बिना पहले खिलाये स्वयं खा लेता है वह घरों की श्री को खा जाता है अर्थात् नाश कर देता है।

अर्थात् गृह की शोभा **इसी में है कि हम अकेले ना खायें।** **

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः।। मनु०।।

जो वेद को न पढ़ के अन्यत्र श्रम किया करता है वह अपने पुत्र पौत्र सहित शूद्रभाव को शीघ्र ही प्राप्त हो जाता है।

– सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास

ऐसा जला अलाव रे

ऐसा जला अलाव रे
कभी बुझे न संकल्पों का
ऐसा जला अलाव रे

भले नाव न साबुत तेरी
टूटी है पतवार भी
कहीं साथ न मौसम का है
जाना है उस पार भी
मगर डुबाई किस तूफाँ ने
मन–शक्ती की नाव रे
कभी बुझे न संकल्पों का
ऐसा जला अलाव रे

कभी न सपनों से हो तेरी
भूले से भी अनबन
अगर इरादे बँधे पाँव से
तो पल – पल सुख नर्तन
अगर उड़े न पंख गगन भर
तो जिन्दा क्या चाव रे ?
कभी बुझे न संकल्पों का
ऐसा जला अलाव रे

कहीं अधर पर मरु के लिख तू
हँसता – गाता सावन
यही समय कल स्वयं भरेगा
सौ फूलों से दामन
उलट समय में न देना तुम
उल्टा जीवन–नाव रे
कभी बुझे न संकल्पों का
ऐसा जला अलाव रे

– भारत भूषण आर्य
9871096526

जिज्ञासा की सही दिशा है मुक्ति का मार्ग

– सन्त समीर

जिज्ञासा यानी जानने की इच्छा, एक ऐसी विशेषता है जो सिर्फ़ मनुष्य के पास है। मनुष्य जैसी जिज्ञासा–वृत्ति पशु–पक्षियों, कीट–पतंगों के पास नहीं होती। किसी जानवर के पास कोई चीज़ ले जाइए, तो उसकी जिज्ञासा–वृत्ति खाद्य–अखाद्य की पहचान तक ही सीमित होगी। खाने लायक़ लगे तो लपक लेगा, नहीं तो सूँघकर छोड़ देगा, बस! लेकिन मनुष्य! सयाने की बात छोड़िए, एक अबोध शिशु के सामने भी कोई चीज़ ले जाइए तो उसकी जिज्ञासा–वृत्ति सिर्फ़ खाद्य–अखाद्य की पहचान तक सीमित नहीं रहेगी। उसकी आँखों में एक अलग ही क़िस्म की जिज्ञासा की चमक तैरती दिखाई देगी। मनुष्य का अबोध शिशु भी अपने सामने की दुनिया के बारे में जानना चाहता है। बोलकर कुछ कह सकने की उम्र नहीं होती तो चहककर, गूँ–गाँ करके और हाथ–पैर पटककर अपनी जिज्ञासा व्यक्त करता है और जब मुँह से बोल फूटना शुरू होते हैं तो तोतली ज़ुबान में प्रश्नों की झड़ी लगा देता है। सामने आने वाली हर नई चीज़ के बारे में नन्हे–मुन्ने बालकों के उल्टे–सीधे सवालों पर किस माँ–बाप ने अपना सिर नहीं धुना होगा! लेकिन, यही समय होता है जबकि बचपन की जिज्ञासा–वृत्ति को सही दिशा मिल जाए तो जीवन को उसका उद्देश्य, असली साध्य मिल जाता है। यही वह समय होता है जबकि नन्हें शिशु की जिज्ञासाओं का उसके परिजन सम्मान नहीं करते और ऊबकर, झुँझलाकर उसे झिड़क देते हैं तो समझिए कि उसके सर्वांगीण विकास की संभावनाओं के खुले आसमान में अँधेरा भर देते हैं।

बचपन की जिज्ञासा–वृत्ति को सही दिशा देना हर माँ–बाप का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य इसलिए है कि इसी जिज्ञासा–वृत्ति पर मनुष्य समाज की सम्पूर्ण गति–प्रगति–दुर्गति टिकी हुई है। जिज्ञासा की सही दिशा के रूप में हम समाज में खुशहाली और सृजनात्मकता देखते हैं तो जिज्ञासा की नकारात्मक दिशा के परिणामस्वरूप विसंगतियाँ, बदहाली और विध्वंसात्मक प्रवृत्तियाँ। मनुष्य के जितने भी आविष्कार और निर्माण हैं, सब उसकी जिज्ञासा–वृत्ति के ही परिणाम हैं। हम इस दुनिया–जहान को जानना–समझना चाहते हैं; ब्रह्माण्ड के सत्य को आर–पार खँगालना चाहते है; इसी वजह से छोटी–छोटी चीज़ों से लेकर चाँद–सितारों तक अपनी पहुँच बनाने की तकनीक आसान बनाने में दिन–रात लगे हुए हैं।

यह मनुष्य की सनक नहीं है कि वह उदरपूर्ति की ज़रूरतों से कहीं आगे जाकर साहित्य, संगीत, कला, विज्ञान आदि की नानाविध गतिविधियों की आयोजनाओं में लगा रहता है। ये सब जिज्ञासा–वृत्ति की विविध अभिव्यक्तियाँ हैं। हमारी आँखों के सामने अनगिनत पेड़–पौधों, जीव–जन्तुओं से सजी धरती और असंख्य तारों भरे आकाश का अनन्त विस्तार इस बात का आमंत्रण देते हैं कि हम उन्हें जानें और समझें। इस ब्रह्माण्ड में जो कुछ अस्तित्वमान है उसका सत्य समझ लेने और उसके पार पहुँच जाने को सिर्फ़ मनुष्य की जिज्ञासा–वृत्ति ही संभव बनाती है और यही उसके जीवन का लक्ष्य भी है। मनुष्य के मस्तिष्क की सामर्थ्य इसीलिए मनुष्येतर प्राणियों से अतिरिक्त है। उदरपूर्ति के लिए तो उतनी ही मस्तिष्कीय सामर्थ्य की ज़रूरत थी, जितनी कि पशु–पक्षियों के पास है; क्योंकि इस सामर्थ्य में ही मनुष्येतर जीव उदरपूर्ति की व्यवस्था यथावत् पूरी कर लेते हैं। बल्कि, मस्तिष्क की इतनी ही सामर्थ्य रहती तो पर्यावरण वग़ैरह के विनाश जैसी कोई बात ही न होती और धरती के हर जीव के लिए पर्याप्त आहार हर कहीं उपलब्ध रहता।

वास्तव में मस्तिष्क की अतिरिक्त क्षमता हमें उदरपूर्ति के साधनों से ऊपर उठकर सृष्टि का सत्य, जीवन का

सत्य जानने के लिए मिली है, जिसे हम प्रायः ग़लत दिशा देकर सृजनात्मक के बजाय विध्सवंसात्मक रूप देते जाते हैं और एक ऐसा जाल बुनते जाते हैं, जिससे निकलना हमारे लिए ही त्रासद हो जाता है। मनुष्य की जिज्ञासा–वृत्ति के मूल उद्‌देश्य को भारतीय जीवन–दर्शन ने बहुत पहले पहचान लिया था, लेकिन दुर्भाग्य कि आज के नक़ली सुखों के दौर में उसे हम भूल गए हैं। सत्य के विविध रूपों को साक्षात् करते हुए परम सत्य तक पहुँचने की भारतीय जीवन–दर्शन की अवधारणा का प्रतिफल ही वास्तव में सम्पूर्ण योग–विज्ञान है। यहाँ भौतिकता और आध्यात्मिकता के बीच कोई विभेदक दीवार नहीं खड़ी है। एक सामंजस्य है, तारतम्य है; बल्कि, भौतिक जीवन का

व्यवहार ही आध्यात्मिकता की प्रयोगभूमि है। जीवन से पलायन करके साधु–संन्यासी वेश धारण करना भारतीय जीवन–दर्शन की मूल विशेषता नहीं, बाद की विकृति है। यहाँ तो 'ब्रह्मचर्य' यानी गुरु के सानिध्य में जिज्ञासा–वृत्ति के समाधान अर्थात् ज्ञान–प्राप्ति, 'गृहस्थ' यानी प्राप्त ज्ञान को व्यवहार में लाने, तथा 'वानप्रस्थ' यानी प्राप्त अनुभवों को समाज कल्याण में लगाने और एक विशिष्ट मानसिक ऊँचाई पर पहुँचने, के बाद ही संन्यास लेने जैसी बात आती है। संन्यास वास्तव में मनुष्य की जिज्ञासा–वृत्ति का चरम बिन्दु है जिसका लक्ष्य सिर्फ़ और सिर्फ़ आत्मज्ञान की राह पर चलते हुए निःस्वार्थ समाज–कल्याण है। यह स्थिति ही सत्य के विविध पायदान चढ़ते हुए परम सत्य तक पहुँचती है और जिसका फलित है– परम आनन्द या परमानन्द। इसी को हमारे शास्त्र कहते हैं– मुक्ति या मोक्ष; यानी जिज्ञासा–वृत्ति तृप्ति हुई और अब कुछ जानना शेष नहीं रहा। यह बात समझ ली जाए तो गली–गली में भटकते देश के लाखों दिशाहीन साधु–संन्यासियों को अपना असली गन्तव्य और मन्तव्य मिल जाए।

निष्कर्ष यही है कि जिज्ञासा–वृत्ति की वजह से ही हम विनाश के साधनों का निर्माण करते हैं या सृजन के उदात्त भावों से भर उठते हैं। मूल प्रश्न और समस्या जिज्ञासा की दिशा की है। यह दिशा सकारात्मक हो तो जीवन में अमृत बरसता है और स्वर्ग कहीं और तलाशने की ज़रूरत नहीं होती और यदि दिशा नकारात्मक हो तो हम वातावरण को विषाक्त करते हैं और अपने आस–पास की दुनिया को नारकीय बनाते हैं। हमारे सत्ता–व्यवस्था चलाने वाले लोगों और समाज को वास्तव में यही गंभीरता से समझने की ज़रूरत है कि यदि हम अपने नौनिहालों की जिज्ञासा–वृत्ति को ठीक दिशा देने के बेहतर उपक्रम कर लें, तो तमाम तरह की विध्वंसात्मक भौतिक प्रगति लोककल्याणकारी बन जाए और सम्पूर्ण वातावरण सृजनात्मकता की महक से सराबोर हो उठे।***

(प्रश्न) मुक्ति एक जन्म में होती है वा अनेकों में?

(उत्तर) अनेक जन्मों में। क्योंकि –

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे पराऽवरे।।

– मुण्डकोपनिषद्

जब इस जीव के हृदय की अविद्या अज्ञानरूपी गांठ कट जाती, सब संशय छिन्न होते और दुष्ट कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं तभी उस परमात्मा जो कि अपने आत्मा के भीतर और बाहर व्याप रहा है, उस में निवास करता है।

(प्रश्न) मुक्ति में परमेश्वर में जीव मिल जाता है वा पृथक् रहता है ?

(उत्तर) पृथक् रहता है। क्योंकि जो मिल जाय तो मुक्ति का सुख कौन भोगे और मुक्ति के जितने साधन हैं वे सब निष्फल हो जावें। वह मुक्ति तो नहीं किन्तु जीव का प्रलय जानना चाहिये। जब जीव परमेश्वर की आज्ञापालन, उत्तम कर्म, सत्संग, योगाभ्यास पूर्वोक्त सब साधन करता है वही मुक्ति को पाता है।

– सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास

क्या नये–नये वेदमंत्र ऋषियों ने बनाये हैं? भाग–१

– कार्तिक अय्यर

पहले–पहल नास्तिक, वामपंथी लोगों ने ये आक्षेप करना शुरु किया कि वेद के मंत्रों को अनेक ऋषियों ने बना–बनाकर वेदों में मिलाया है। इसमें डॉ सुरेंद्रकुमार अज्ञात और कबीरपंथी नास्तिक विद्वान अभिलाष दास हैं। कुछ वेदमंत्रों का प्रमाण देकर ये लोग यह सिद्ध करना चाहते हैं कि देखो, तुम्हारे ऋषि ही सूक्तों में कह रहे हैं कि हमने नये–नये ''वेदमंत्र'' रचे हैं। हम लेख के दूसरे भाग में उनके दिये प्रमाणों की परीक्षा करेंगे। पहले हम वेद के व वैदिक स्तोम् के संदर्भ में कुछ जान लें–

(क):– 'मंत्र' शब्द का अर्थ –

अमरकोश –

वेदभेदे गुप्तवादे मन्त्रो मित्रो रवावपि॥

वाचस्पत्यम्–

१ गुप्तभाषणे, रहसि कर्त्तव्याव–धारणार्थमुक्ता

२ देवादीनां साधनार्थं तन्त्राद्युक्ते शब्द–भेदे,

३ वेदविभागभेदे च।

यहां पता चला कि वेदराशि,गुप्त मंत्रणा,देवादिकों के साधन के लिये तंत्र या यज्ञादि में शब्दराशि – ये मंत्र के अर्थ हैं।

मंत्र यज्ञादि कर्मों में भी होते हैं। श्रौतादिसूत्रों, उपनिषदों और यहां तक के तंत्र व पुराणों में भी मंत्र है। अतः कर्मकांड के लिये कोई भी ऋषि या आचार्य मंत्र बना सकता है।

अतः वेद में आचार्य आदि को कर्मकांड वाले मंत्र बनाने का वर्णन भी संभव है।

(ख)– 'स्तोम' का अर्थ–

वाचस्पत्यम् से–

स्तोम॑ आत्मगुणाविष्करणे अद० चु० उभ० अक० सेट्। स्तो–मयति––ते अतुस्तोमत्––त। बह्वच्कत्वात् न षोपदेशः।

स्तोम॑ पु० स्तोम––अच् स्तु––मन् वा।

१ समूहे अमरः। २ यज्ञेहेमच०। ३ स्तवे ४ स्तुतिभेदे ५ मस्तक६ धने ७ शस्य

स्तोम का अर्थ है आत्मगुणों का वर्णन। किसी का समूह, यज्ञ हेतु रचा गया, स्तुतिभेद ,धन, मस्तक आदि।

शब्दसागर –

स्तोम॑ mfn (–मः–मा–मं) Crooked, bent m. (–मः)

1. A heap, a number [Page 810-a+60] a multitude, a quantity.
2. Sacrifice, oblation.
3. A Soma libtion.
4. Praise.

अतः किसी भी तरह के स्तुति भेद को 'स्तोम' कहते हैं।

वैदिक इंडेक्स से –

Stoma denotes 'song of praise' in the Rigveda. [1] Later [2] the term has the technical sense of the typical forms in which the Stotras are chanted.

स्तोम पु.

स्तोत्र के गायन का रूप, जिसमें ऋचायें आवृत्ति द्वारा निश्चित संख्या तक बढ़ा ली जाती हैं, त्रिवृत् (9), पञ्चदश (15), 17, 21, 24, 27, 33, 48. चतुर्विंश (24) को छोड़कर सभी स्तोम विभिन्न विष्टुतियों के माध्यम से प्राप्त किये जा सकते हैं एवं सभी विष्टुतियों के तीन पर्याय होते हैं। अगिन्ष्टोम में प्रथम चार स्तोम प्रयुक्त होते हैं। प्रथम आज्यस्तोत्र में ऋ.वे. 6.16. १०–12 पर आधृत एवं पाँच के प्रत्येक तीन पर्यायों से युक्त 15 का स्तोम (पञ्चदश) होता है : अ अ अ ब स, अ ब ब ब स, अ ब स स स। इसे 'पञ्चपञ्चिनी विष्टुति' कहते हैं। स्तोम प्रथमतया वृत (चुने गये) अध्वर्यु द्वारा जोड़ा जाता है, बौ.श्रौ.सू. 2.3:22।

यहां पर साफ है–'' स्तोम पु.–स्तोत्र के गायन का रूप, जिसमें ऋचायें आवृत्ति द्वारा निश्चित संख्या तक बढ़ा ली जाती हैं।''

यहां साफ है कि अगल–अलग तरह से Permutation Combination से वेदमंत्रों को गाना 'स्तोम' कहलाता है।

स्तोम का प्रयोग ऋग्वेद में –

अब हम 'स्तोम' के संबंध में ऋग्वेद के कुछ प्रमाण और उस पर महर्षि दयानंद के संस्कृत भाष्य की हिन्दी देते हैं:–

(१)– **स नः स्तवान आ भर गायत्रेण नवीयसा।**
रयिं वीरवतीमिषम् ।।

हे भगवन् (सः) जगदीश्वर ! आप (नवीयसा) अच्छी प्रकार मन्त्रों के नवीन पाठ गानयुक्त (गायत्रेण) गायत्री छन्दवाले प्रगाथों से (स्तवानः) स्तुति को प्राप्त किये हुये (नः) हमारे लिये (रयिम्) विद्या और चक्रवर्त्ति राज्य से उत्पन्न होनेवाले धन तथा जिसमें (वीरवतीम्) अच्छे–२ वीर तथा विद्वान् हों, उस (इषम्) सज्जनों के इच्छा करने योग्य उत्तम क्रिया का (आभर) अच्छी प्रकार धारण कीजिये ।१।

भावार्थ– इस मन्त्र में श्लेषालंकार है। तथा पहिले मन्त्र से 'चकार' की अनुवृत्ति की है। हर एक मनुष्य को वेद आदि के नवीन–२ अध्ययन से वेद की उच्चारण–क्रिया प्राप्त होती है, इस कारण 'नवीयसा' इस पद का उच्चारण किया है। (ऋग्वेद १/१२/११)

यहां पर साफ है–

(नवीयसा) अच्छी प्रकार मन्त्रों के नवीन पाठ गानयुक्त (गायत्रेण) गायत्री छन्दवाले प्रगाथों से (स्तवानः) स्तुति को प्राप्त किये हुये।

हर एक मनुष्य को वेद आदि के नवीन–२ अध्ययन से वेद की उच्चारण–क्रिया प्राप्त होती है, इस कारण 'नवीयसा' इस पद का उच्चारण किया है।

अर्थात् 'नये–नये' स्तोम का अर्थ मंत्रों के नये–नये विकृति पाठ या सानगान आदि भी हो सकता है। स्वामीजी ने वेदादिशास्त्र के नवीन–नवीन अध्ययन करने वाले छात्रों की भी बात की है। अतः यहां पर नये–नये वेदमंत्र बनना नहीं लिखा है।

(२)– **इन्द्रमीशानमोजसाभि स्तोमा अनूषत।**
सहस्रं यस्य रातय उत वा सन्ति भूयसीः ।।

(यस्य) जिस जगदीश्वर के ये सब (स्तोमाः) स्तुतियों के समूह (सहस्रम्) हजारों (उत वा) अथवा (भूयसीः) अधिक (रातयः) दान (सन्ति) हैं, उस (ओजसा) अनन्त बल के साथ वर्त्तमान (ईशानम्) कारण से सब जगत् को रचनेवाले तथा (इन्द्रम्) सकल ऐश्वर्य्ययुक्त जगदीश्वर के (अभ्यनूषत) सब प्रकार से गुणकीर्त्तन करते हैं ।।८।। (ऋग्वेद, १/११/६,८)

(३)–**तवाहं शूर रातिभिः प्रत्यायं सिन्धुमावदन्।**
उपातिष्ठन्त गिर्वणो विदुष्टे तस्य कारवः।।

हे (शूर) धार्मिक घोर युद्ध से दुष्टों की निवृत्ति करने तथा विद्याबल पराक्रमवाले वीर पुरुष ! जो (तव) आपके निर्भयता आदि दानों से मैं (सिन्धुम्) समुद्र के समान गम्भीर वा सुख देनेवाले आपको (आवदन्) निरन्तर कहता हुआ (प्रत्यायम्) प्रतीत करके प्राप्त होऊँ। हे (गिर्वणः) मनुष्यों की स्तुतियों से सेवन करने योग्य! जो (ते) आपके (तस्य) युद्ध राज्य वा शिल्पविद्या के सहायक (कारवः) कारीगर हैं, वे भी आपको शूरवीर (विदुः) जानते तथा (उपातिष्ठन्त) समीपस्थ होकर उत्तम काम करते हैं, वे सब दिन सुखी रहते हैं ॥६॥

इस मन्त्र में लुप्तोपमालंकार है। ईश्वर सब मनुष्यों को आज्ञा देता है कि– जैसे मनुष्यों को धार्मिक शूर प्रशंसनीय सभाध्यक्ष वा सेनापति मनुष्यों के अभयदान से निर्भयता को प्राप्त होकर जैसे समुद्र के जीव समुद्र के गुणों को जानते हैं, वैसे ही उक्त पुरुष के आश्रय से अच्छी प्रकार जानकर उनको प्रसिद्ध करना चाहिये तथा दुःखों के निवारण से सब सुखों के लिये परस्पर विचार भी करना चाहिये ॥६॥ (ऋग्वेद, १/१०/१२)

(४)– हे (गिर्वणः) वेदों तथा विद्वानों की वाणियों से स्तुति को प्राप्त होने योग्य परमेश्वर !

हे भगवन् परमेश्वर ! जो–२ अत्युत्तम प्रशंसा है सो–२ आपकी ही है, तथा जो–२ सुख और आनन्द की वृद्धि होती है सो–२ आप ही को सेवन करके विशेष वृद्धि को प्राप्त होती है। इस कारण जो मनुष्य ईश्वर तथा सृष्टि के गुणों का अनुभव करते हैं, वे ही प्रसन्न और विद्या की वृद्धि को प्राप्त होकर संसार में पूज्य होते हैं ।।१२।।

यहां इन मंत्रों में ये प्रयोग हैं–

(स्तोमाः) स्तुतियों के समूह – परमात्मा के लिये स्तुति समूह।

हे (गिर्वणः) मनुष्यों की स्तुतियों से सेवन करने योग्य! – राजा या वीर योद्धा के लिये स्तुति समूह। (गिर्वणः) वेदों तथा विद्वानों की वाणियों से स्तुति को प्राप्त होने योग्य परमेश्वर !

यहां पर स्तोम शब्द से 'स्तुति समूह' अर्थ ले सकते हैं। यानी कि समूह अर्थ 'स्तोम' शब्द का होता ही है।

अनेक तरह के स्तोत्र,प्रार्थनायें, भजन आदि परमेश्वर की स्तुति के लिये रचे गये हैं। वीर पुरुषों की स्तुति में महाकाव्य व इतिहास तक रचे गये हैं और लोकगीत भी। अतः यहां केवल ''वेदमंत्र ऋषियों ने रच दिये'' ऐसा नहीं मानना चाहिए।

(५)– 'उक्थ' का अर्थ–

उक्थमिन्द्राय शंस्यं वर्धनं पुरुनिष्षिधे। शक्रो यथा सुतेषु णो रारणत्सख्येषु च।।

(यथा) जैसे कोई मनुष्य अपने (सुतेषु) सन्तानों और (सख्येषु) मित्रों को करने को प्रवृत्त होके सुखी होता है, वैसे ही (शक्रः) सर्वशक्तिमान जगदीश्वर (पुरुनिष्षिधे) पुष्कल शास्त्रों का पढ़ने पढ़ाने और धर्मयुक्त कामों में विचरनेवाले (इन्द्राय) सबके मित्र और ऐश्वर्य्य की इच्छा करनेवाले धार्मिक जीव के लिये (वर्धनम्) विद्या आदि गुणों के बढ़ानेवाले (शंस्यम्) प्रशंसा (च) और (उक्थम्) उपदेश करने योग्य वेदोक्त स्तोत्रों के अर्थों का (रारणत्) अच्छी प्रकार प्रकाश करके सुखी बना रहे ॥५॥(ऋग्वेद, १/१०/५)

यहां पर स्पष्ट है– ''(उक्थम्) उपदेश करने योग्य वेदोक्त स्तोत्रों के अर्थों का (रारणत्) अच्छी प्रकार प्रकाश करके सुखी बना रहे।''

यहां 'उक्थ' का अर्थ वेदस्तोत्रों के अर्थों का प्रकाशन है।

कई ऋषियों ने पदपाठ सामगान आदि से वेदस्तोत्रों का अर्थ प्रकाशित किया। कई ऋषियों ने अनेक तरह की शाखाओं में मंत्रों को सरल रूप में रखा(मूल शाखा तो शुद्ध ही रही)। शतपथब्राह्मण आदि ब्राह्मणों में प्रतीके देकर वेदार्थ बताया गया। यहां यही अर्थ लेना चाहिए। यहां पर ईश्वर आदेश देता है कि इसी तरह से ऋषि–मुनि आदि विद्वान लोग वेदार्थ का निरंतर प्रकाश करें।

(६)–एहि स्तोमाँ अभि स्वराभि गृणीह्या रुव।
ब्रह्म च नो वसो सचेन्द्र यज्ञं च वर्धय।।

हे (इन्द्र) स्तुति करने के योग्य परमेश्वर ! जैसे कोई सब विद्याओं से परिपूर्ण विद्वान् (स्तोमान्) आपकी स्तुतियों के अर्थों को (अभिस्वर) यथावत् स्वीकार करता कराता वा गाता है, वैसे ही (नः) हम लोगों को प्राप्त कीजिये। तथा हे (वसो) सब प्राणियों को वसाने वा उनमें वसनेवाले ! कृपा से इस प्रकार प्राप्त होके (नः) हम लोगों के (स्तोमान्) वेदस्तुति के अर्थों को (सचा) विज्ञान और उत्तम कर्मों का संयोग कराके (अभिस्वर) अच्छी प्रकार उपदेश कीजिये (ब्रह्म च) और वेदार्थ को (अभिगृणीहि) प्रकाशित कीजिये। (यज्ञं च) हमारे लिये होम ज्ञान और शिल्पविद्यारूप क्रियाओं को (वर्धय) नित्य बढ़ाइये। **(४)**

भावार्थः– इस मन्त्र में लुप्तोपमालंकार है। जो पुरुष वेदविद्या वा सत्य के संयोग से परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना करते हैं। उनके हृदय में ईश्वर अन्तर्यामी रूपसे वेदमन्त्रों के अर्थों को यथावत् प्रकाश करके निरन्तर उनके लिये सुख का प्रकाश करता है। इससे उन पुरुषों में विद्या और पुरुषार्थ कभी नष्ट नहीं होते। **(४)** (ऋग्वेद १/१०/५)

यहां पर कहा है– ''जैसे कोई सब विद्याओं से परिपूर्ण विद्वान् (स्तोमान्) आपकी स्तुतियों के अर्थों को (अभिस्वर) यथावत् स्वीकार करता कराता वा गाता है, वैसे ही (नः) हम लोगों को प्राप्त कीजिये।''

यानी स्तुतियां विद्वान लोग भी गानयुक्त होकर करते हैं। इस पर पाठक लोग बौधायन श्रौतसूत्र में दी 'स्तोम' की परिभाषा याद करें–''स्तोत्र के गायन का रूप, जिसमें ऋचायें आवृत्ति द्वारा निश्चित संख्या तक बढ़ा ली जाती हैं।'' यहां पर भी ऐसी ही सामगान आदि से गा–गाकर स्तुति करने का वर्णन है। कालांतर में अनेक गानपाठ बनते–लुप्त होते रहे हैं।

वैदिक सूक्तों को भी स्तोम कहा गया है–

(७)– मत्स्वा सुशिप्र मन्दिभिः स्तोमेभिर्विश्वचर्षणे ।
सचौषु सवनेष्वा ।।

हे (विश्वचर्षणे) सब संसार के देखने तथा (सुशिप्र) श्रेष्ठ ज्ञानयुक्त परमेश्वर ! आप (मन्दिभिः) जो विज्ञान

वा आनन्द के करने वा करानेवाले (स्तोमेभिः) वेदोक्त स्तुतिरूप गुणप्रकाश करनेहारे स्तोत्र हैं, उनसे स्तुति को प्राप्त होकर (एषु) इन प्रत्यक्ष (सवनेषु) ऐश्वर्य्य देनेवाले पदार्थों में हम लोगों को (सचा) युक्त होकर (मत्स्व) अच्छे प्रकार आनन्दित कीजिये। ।।३।। (ऋग्वेद १/६/३)

(८)—एवा ह्यस्य काम्या स्तोम उक्थं च शंस्या । इन्द्राय सोमपीतये।।

(अस्य) जो—२ इन चार वेदों के (काम्ये) अत्यन्त मनोहर (शंस्ये) प्रशंसा करने योग्य कर्म वा (स्तोमः) स्तोत्र हैं, (च) तथा (उक्थम्) जिसमें परमेश्वर के गुणों का कीर्तन है, वे (इन्द्राय) परमेश्वर की प्रशंसा के लिये हैं। कैसा वह परमेश्वर है कि जो (सोमपीतये) अपनी व्याप्ति से सब पदार्थों के अंश—२ में रम रहा है।। १०।। (ऋग्वेद १/८/१०)

यहां साफ है कि ''परमेश्वर के गुणों का कीर्तन'' से ही 'स्तोम' ,'स्तोत्र' का भाव है। ऐसे अनेक स्तोत्र कवियों ने रचे हैं। ऋषियों ने वेदमंत्रों को अलग—अलग ढंग से गा—गाकर गानपाठ बनाये हैं—वे आर्षेय ब्राह्मण में हैं। अतः 'नये स्तोम्' बनने का अर्थ 'नये वेदमंत्र बनना' नहीं है।*********************

आर्ष क्रान्ति पत्रिका के लिए आर्य लेखक बन्धु अपनी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ भेंजें।

संगठन—सूक्त

ओ३म् सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर।1।

हे प्रभो ! तुम शक्तिशाली हो बनाते सृष्टि को ।
वेद सब गाते तुम्हें हैं कीजिए धन—वृष्टि को।।

सगंच्छध्वं सं वदध्वम् सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे सं जानाना उपासते।2।

प्रेम से मिल कर चलो बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भांति तुम कर्त्तव्य के मानी बनो।।

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।3।

हों विचार समान सब के चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूँ बराबर भोग्य पा सब नेक हो।।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानी वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।4।

हों सभी के दिल तथा संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हो प्रेम से जिससे बढ़े सुख सम्पदा।।

कहानी

स्वदेशी नमक

– अखिलेश आर्येन्दु ✍

विपुल तुम्हारी याददास्त खराब है कि तुम लापरवाह हो, इतनी जल्दी अपने देश की माटी और नमक का स्वाद ही भूल गए। अभी देश को आजादी मिले जुम्मा–जुम्मा 70 साल बीते हैं। इन सत्तर सालों में कितनी चीजों से हम कटते जा रहे हैं! अभी नमक का स्वाद भूल गए हो, कुछ दिनों में गांधी को भूल जाओगे। खून में ठंठापन जिस तरह से बढ़ता जा रहा है, ऐसे सुभाष को भूला दोगे। देश को बचाने का जुनून जिस तरह से खत्म होता जा रहा है, भगतसिंह भी कुछ दिनों में भुला दिए जाएंगे। आखिर कुछ याद रहेगा भी कि नहीं?''बोलते–बोलते सुघन की आवाज तल्ख हो गई।

जिस तरह से सुघन की आवाज में आक्रोश बढ़ रहा था उससे उसके हृदयघात की संभावना लगातार बढ़ती ही जा रही थी। विपुल यह सोचकर सुघन की बातों को तवज्जो नहीं दिया कि तर्क–वितर्क का समय, अभी नहीं है।

आज कितनी समस्याएं हैं। कितनी परेशानियों में लोग जी रहे हैं। लेकिन उनकी समस्या और परेशानी को हलका करने वाला कोई है। जो लोग समाजसेवक होने का दावा करते हैं नाम और धन के लिए प्राथमिकता है। सुघन यह सोच–सोचकर पिछले एक महीने से चारपाई पर पड़ा है। वह अपने इरादों और विचारों का पक्का आदमी है। लेकिन लोग उसे बेवकूफ समझते हैं। वह फिर भी विचलित नहीं होता। उसे पता है कि यदि लोगों के हँसने–रोने की वह परवाह करने लगेगा तो अपने आंदोलन को आगे नहीं बढ़ा पाएगा जिसकी आज बहुत जरूरत है।

सुघन दिनभर कोई न कोई योजना बनाने में लगा रहता है। इसे लेकर उसकी मां माया में उससे अक्सर तकरार होती रहती हैं। आज भी मां, रमन और मधु तीनों की राय को नजरअंदाजकर उसने इंकलाबी आंदोलन को आगे बढ़ाने की जिद करता रहा।

''हां सुघन मैं जानती हूं, तुम्हारी जिंदगी देश–समाज के लिए समर्पित है, लेकिन कभी यह सोचा है, देश–समाज के लिए मर मिटने वालों को इसके बदले में कुछ मिला? गांधी को, भगत को या सुभाष को?'' एक को भी कुछ मिला हो, तो बताओ। सुघन की पत्नी मधु के ये शब्द कितने सच हैं ।

''आओ बैठो विपुल, तुम ही तो मेरे विश्वासनीय दोस्त हो। जिससे मैं अपने मन की हर बात बिना छिपाए कह सकता हूं।''सुघन करवट बदलते हुए बोला।

मुख्य मार्ग से इंकलाबी कांरवां गुजरते देख विपुल को बेहद गुस्सा आया। वह बुद्बुदाया...ये लोग अभी देश को सौ साल पीछे ले जाना चाहते हैं। बात करेंगे स्वदेशी की लेकिन देश की प्रगति के साथ नहीं चलना चाहते।''

सुघन इंकलाबी जयहिंद के नारे को सुन उठने को हुआ। वह उत्साह से भर गया। स्वस्थ होता तो आज वह भी आंदोलन का हिस्सा होता। वह उठने को हुआ लेकिन कमजोरी से उठ नहीं पा रहा था। मधु ने उसे लेटे रहने की सलाह दी।

''मधु, तुम मुझे तो चारपाई से उठने के लिए रोक सकती हो, लेकिन आंदोलनकारी साथियों को भी क्या रोक सकती हो?'' सुघन की आवाज में खिन्नता साफ सुनाई पड़ रही थी।

''मैं कौन होती हूं किसी को रोकने वाली। तुम ठीक–ठाक होते तो तुम्हें भी न रोकती। वैसे भी तुम क्या मेरे रोकने से रुकते हो।''

''देखो मधु,आज के दौर में अच्छे–बुरे और सच–झूठ को समझने वाले कितने लोग हैं। कितने लोग हैं इस देश में जिनके अंदर देश के प्रति संवेदना है। जिसके अंदर संवेदना होती है वही इंकलाबी बनता है।'' सुघन ने मधु को समझाते हुए कहा।

विपुल मेहता अपने दोस्त सुघन और मधु की बातों को शांत चित सुनता रहा। वह बोलना तो चाहता था लेकिन हालात ऐसे थे कि न बोलना ही समझदारी थी।

''भइया एक बात कहूं......आप बुरा तो नहीं मानेंगे?''

''हां बोलो रमन। तुम तो मेरे छोटे भाई हो। मैंने तुम्हारी किसी बात का कब बुरा माना है जो आज कह रहे हो?'' सुघन की आवाज भनभाती हुई दीवारों से टकरा गई।

''भाभी का मानना है कि आप जब तक पूरी तरह ठीक न हों जाएं, एलोपैथिक दवाओं को लेते रहना चाहिए।''

''रमन, तुम और तुम्हारी भाभी मेरे विचारों और संकल्पों से ही नहीं आदतों से भी वाकिफ हो। मैं तो विदेशी कंपनियों का नमक खाना भी हराम समझता हूं। फिर बार...बार मुझे तंग क्यों किया जा रहा है?'' सुघन झल्लाकर बोला।

रमन की बातें सुनकर विपुल को रहा नहीं गया। उसने रमन को समझाते हुए कहा,–''तुम सुघन के विचारों कार्यों और आदतों को जानते हो। और यह भी जानते हो कि सुघन अपने विचारों से इतर कभी समझौता नहीं करता, भले ही उसकी जान चली जाए।''

''विपुल भइया! यहां न तो विचारों की बात है, न आदतों की और न ही देशी–विदेशी का ही कोई मुद्दा है। यहां तो बस सुघन भइया की सेहत ही एक मुद्दा है।'' जोशीली आवाज में रमन बोला।

''अरे रमन, तुम मेरे स्वास्थ्य को लेकर इतने चिंतित हो! तुमने तो अपने भाई की पहले खबर नहीं ली, अब कहां से इतना प्यार उमड़ पड़ा?'' रमन कुछ सफाई देता इसके पहले ही मधु बीच में बोल पड़ी।

''दवा खाने का समय हो गया है। क्या मेरी लाई दवाइयां खाने में कोई संकल्प खत्म होता है या...?''

सुघन ने मधु की बातों को कोई तवज्जो नहीं दिया। शायद वह स्वदेशी इंकलाबी आंदोलनकारियों के बारे में सोच रहा था।

विपुल को चुप रहना असह्य लगने लगा था। उसने मधु को टोकते हुए कहा,–अरे सुघन, दवा खा लो। मधु भाभी जो दवाई खिला रही हैं वह एलोपैथी जरूर है लेकिन स्वदेशी कंपनी की बनाई हुई है।

सुघन चुपचाप सब की बातें सुनता रहा। स्वस्थ होने का उसका आत्मविश्वास पहले से कहीं अधिक बढ़ गया था। उसके स्वास्थ्य में सुधार होने लगा था लेकिन परिवार वालों में सुघन के प्रति नकारात्मक भावों में कमी नहीं आई थी। उन्हें विश्वास ही नहीं था कि बिना दवा खाए केवल आत्मविश्वास से भी आदमी चंगा हो सकता है।

जब दवा खिलाने के सभी प्रयास निष्फल हो गए तो मधु, रमन और विपुल सुघन के कमरे से बाहर चले गए। तभी फोन की घंटी बजी। फोन मधु ने उठाया।

''हलो...हलो, ...हां बोलिए, आप कौन बोल रहे हैं। क्षमा करें, आप की आवाज पहचान नहीं पा रही हूं। फोन करने वाले व्यक्ति की आवाज मधु को साफ सुनाई नहीं पड़ रही थी।

फोन की घंटी फिर बजी। हां बोलिए, आप कौन बोल रहे हैं?''

''मैं वैद्य आदित्यवर्धन बोल रहा हूं। आप सुघन पटेल के परिवार से बोल रही हैं?''

''जी, मैं उनकी पत्नी मधु बोल रही हॅं। हां...लेकिन ... अभी वो बात करने में समर्थ नहीं हैं। वह काफी दिन से बीमार चल रहे हैं।''

''दवाई चल रही होगी?'' वैद्य आदित्य ने कारूणिक आवाज में पूछा।

''हां, दवाई तो आई है लेकिन ...?''

''समझा नहीं आप का कहना। दवाई आई है लेकिन आगे क्या कहना चाहती हैं। साफ बताइए तो मैं कुछ बोलूं।'' वैद्य आदित्य की आवाज में भारीपन बढ़ता जा रहा था।

''वह कहते हैं ठीक हो जाएंगे, लेकिन उनकी बीमारी तो अभी जस की तस है।'' मधु ने वैद्य को अपनी पीड़ा कह दी।

मधु की आवाज में उभरी पीड़ा वैद्य आदित्य के अंतरमन ने बखूबी महसूस कर लिया था। उन्होंने मधु को ढांढस बधाते हुए कहा,–

''उनकी इच्छा का ध्यान रखते हुए ही उन्हें औषधि सेवन कराइए। विचारों के प्रतिकूल दवा के सेवन से कोई लाभ नहीं हो पाता। कभी–कभी तो फायदा के स्थान पर नुकसान उठाना पड़ जाता है।

''आप ठीक कह रहे हैं वैद्य जी। लेकिन जब तक बीमारी नियंत्रण में नहीं आ जाती तब तक एलोपैथिक दवा खाने में क्या बुराई है।''

''कौन था मधु?''सुघन ने धीरे से पूछा।

''आप के पुराने जिगरी दोस्त वैद्य आदित्यवर्धन।''

''क्या कह रहे थे?''

''बस, समाचार पूछ रहे थे।''

''और कुछ नहीं कह रहे थे?''

''हां,.आयुर्वेदिक दवाओं की तरीफों के पुल बाध रहे थे। आप की तरह वह भी स्वदेशी के ध्वजवाहक जो ठहरे।''

''ठीक ही तो कह रहे थे। हमारे देश की सबसे प्राचीन और निरापद चिकित्सा पद्धति है–आयुर्वेद। आज तक एक भी व्यक्ति उसके गलत असर से मौत का शिकार नहीं हुआ। और एलोपैथिक ने तो लाखों लोगों की जान ले ली है।''

सुघन आज बेहतर महसूस कर रहा था। उसे लगा उसके और मधु के विचारों में कई स्तरों और बातों में विरोधाभास है।

लेकिन वह मधु की भावनाओं का आदर करते हुए उसको कभी अपने विचारों से ठेस नहीं पहुंचाना चाहता था। कर्कश वाणी बोलने वाला भी एक तरह से हिंसा करता है। इस बात का वह हमेशा ध्यान रखता था।

मधु सुघन में इस बात को लेकर अक्सर तर्क–वितर्क होता रहता था कि जिदंगी के लिए कौन सी शिक्षा, चिकित्सा, नौकरी, व्यापार, आहार और विचार अच्छे होते हैं और कौन से व्यर्थ। मधु के अपने कोई अलग विचार नहीं थे फिर भी वह जमाने के अनुसार अपने विचारों को माजती रहती है। सच को सच कहने की हिम्मत भले ही न हो लेकिन असत बोलना भी तो अच्छा नहीं। सुघन मधु दोनों के विचारों में यही अंतर बना रहता है।

जब रमन, मधु, विपुल और सुघन की मां ने सुघन पर दवा खाने का दबाव डालना छोड़ दिया तो सुघन का चेहरा खिल उठा। उसने चारों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कहा,– 'आप सब ने मेरे साथ जो न्याय और कृपा की है उससे मेरी आधी बीमारी फुर्र हो गई। मुझे पूरा यकीन है कि जल्द ही मैं पूरी तरह स्वस्थ हो जाऊंगा।'

मधु ने कुर्सी खिसकाई और सुघन को मेज पर रखे फल को खाने के लिए कहा। सुघन ने मधु की फल खाने के लिए कहना बहुत अच्छा लगा। उसने अमरूद के साथ नमक लगाने को कहा।

मधु दौड़कर नमक ले आई।

''अरे, इतनी जल्दी नमक की डली कहा से मिल गई?''

''किचन में लाकर मम्मी ने कल ही रखा था। पिसा और ठोस दोनों। '' मधु शायद नमक को लेकर कोई रहस्य छिपा रही थी।

''मम्मी तो हमेशा स्वदेशी नमक लाती हैं?'' सुघन ने पूछा।

''हां, उन्हें भी स्वदेशी नमक पसंद है लेकिन मुझे यह पता नहीं की नमक की यह डली स्वदेशी है या....?'' मधु ने संशय प्रकट किया।

''मम्मी से पूछा नहीं?''

''पूछा तो था, लेकिन उन्हें भी ठीक से नहीं मालुम। दूकानदार ने कहा था–नमक जहां से लाया था वह नई दूकान थी। इस लिए वह इस बार कुछ इतमिनान से कह नहीं सकता।''

लेकिन आप नमक को ही लेकर इतने क्यों अशांत हैं? साबुन, कपड़ा, मसाले, जूता–चप्पल, कंधी गृहस्थी के अनेक चीजें हैं, किसे स्वदेशी कहेंगे और किसे विदेशी? दूकानदार वही लाता है जो सब पसंद करते हैं। आप की पसंद नपसंद से उसे कुछ लेना–देना नहीं। मधु का अपना दर्शनशास्त्र सुघन के लिए भले ही व्यावहारिक न हो लेकिन वास्तविकता तो यही है।

मधु नमक की पड़ताल करने सास के पास पहुंच गई ।

अभी मधु कुछ बोलती इसके पहले रमन बोल पडा।

''भाभी, भइया ने तो दवाइयां खा ली हैं न।''

''नहीं वे पहले से बेहतर फील कर रहे हैं। उनका मानना है रोग मुक्त होने का उनका संकल्प उन्हें रोगमुक्त कर देगा।''

रमन हँसने लगा।

'क्यों हँस रहे हो रमन। क्या मैंने कोई मूर्खतापूर्ण बात की है?''

''नहीं भाभी। मैं इस लिए हँस रहा हूं कि दवा न खाने के लिए भइया कैसे–कैसे बहाने ढूढ लेते हैं। रमन हँसता रहा।

विपुल दोनों की बातों को चुपचाप सुनता रहा। उसे लग रहा था, जैसे कोई जिद्दी बालक को उसकी जिद को पूरा करने के लिए बदल–बदल के खिलौने दे रहा हो और बालक बार–बार उसे फेंक रहा हो। उसने अपने मन की बात बाहर कर ही दी।

''भाभी, लगता है आप सभी ने सुघन के आगे हथियार डाल दिए हैं। उनकी अपनी स्वदेशी जीत गई और हमारी मार्डन लाइफ की हार हो गई है।

विपुल की तेज आवाज यह बता रही थी, सुघन की सोच से वह एकदम इत्तफाक नहीं करता। नया जमाना, नया जोश और नई उमंग आज के समाज में हिलोरे मार रहे हैं। अब स्वदेशी पुरानी बात हो गई। अब गांधी –विनोबा को कौन पूछता है। स्वदेशी को लाश की तरह ढोए जाना अक्लमंदी तो नहीं कही जाएगी।

विपुल की तेज आवाज घर भर में गूंज उठी। लेकिन सुघन ने सुनकर भी अनसुना कर दिया। किसी की धारणा बदलना आज के जमाने में कितना मुश्किल का काम है। वह किसी की भावना को ठेस पहुंचाना हिंसा मानता है। फिर विपुल, रमा और रमन तो उसके अपने हैं।

''ये गाड़ियों की तेज आवाज ?''मधु ने रमन से पूछा।

''भाभी, वही इंकलाबी स्वदेशी आंदोलन वाले हैं। उन्हें सुरक्षा देने के लिए पुलिस की गाड़ियां लगी हैं।''

''अच्छा, स्वदेशी आंदोलन वाले तो शांति और सदभावना पूर्वक अपना आंदोलन करते हैं फिर पुलिस की क्या जरूर थी?''

''भाभी, आप ने सुना नहीं की सतहरिया में अमेरिकी कंपनी कोका कोला का नया कारखाना लगने का प्रस्ताव है। बस, उसे रोकने के लिए इंकलाबी भाई वहां जा रहे हैं।''

''मतलब, जिला प्रशासन ने आंदोलन और धरना–प्रदर्शन करने वालों का हौसला तोड़ने के मकसद से पुलिस भेजी होगी?''

''रमन धीरे–धीरे बोलो। यदि भइया ने सुन लिया तो उन्हें बहुत दुख होगा। हां, तुम्हारे भइया इस बाबत कुछ पूछें तो साफ इनकार कर देना।''

गाड़ियों की घरघराती आवाज सुनकर सुघन चारपाई पर उठ बैठा। उसने मधु को आवाज दी।

''अरे मधु! ये गाड़ियों की आवाज कैसी है... और यह शोरगुल कहां हो रहा है?''

''अभी पता लगाती हूं।''

मधु पड़ोस वाले वर्मा जी के घर चली गई। आखिर वह सुघन से सच बताए तो उन्हें बहुत दुख होगा और यदि झूठ बोले तो उनका विश्वास उसके प्रति खत्म होगा। यह विश्वास ही तो है जो पति–पत्नी के बीच एक पूरकता का संबंध बनाता है, उसे समझदार पत्नी क्यों तोड़ना चाहेगी।

मधु जब आधे घंटे तक लौटकर नहीं आई तो सुघन ने रमन को आवाज दी। रमन कम्प्यूटर पर खेल खेलने में मस्त था। सुघन की आवाज सुनकर भी उसने अनसुना कर दिया। रमन भी जब नहीं आया तो उसने मां को आवाज दी। मां सुनते ही सुघन के पास पहुंची और सिर पर हाथ फेरते हुए बोली–बेटा! क्या बात है, इतने बेचैन क्यों हो रहे हो। क्या घबराहट हो रही है?''

''नहीं मां, बस यह बताइए कि इतना शोरगुल और गाड़ियों की आवाज किसकी है?''

''बेटा, सड़क है तो गाड़ियां आएं–जाएंगी। आज क्या कोई नई बात है।''

''नहीं मां, गाड़ियों की आवाज ही नहीं जिंदाबाद–मुर्दाबाद का शोर भी तो सुनाई पड़ रहा है। कहीं इंकलाबी स्वदेशी भाई लोग तो नहीं?''सुघन की आवाज भर्रा गई।

''बेटा, ये आंदोलन वाले भी बिना कुछ समझे–विचारे कुछ न कुछ शोरगुल करते ही रहते हैं। इससे तुम परेशान न हो। अरे, फैक्ट्री लग रही है तो लोगों को रोजगार ही मिलेगा। कितनो की रोजीरोटी का इंतजाम हो जाएगा। मैं तो कहती हूं, फैक्ट्री लगने में सभी को खुशी होनी चाहिए। लेकिन देखो, इन आंदोलन वालों की मति मारी गई है, उसका विरोध कर रहे हैं। कह रहे हैं, किसी भी हालात में फैक्ट्री लगने नहीं दूंगा। इससे पर्यावरण खराब होगा और पाताल का पानी खत्म हो जाएगा। अब क्या कहें, इनकी बुद्धि का।''

''मां, आप जो कह रही हैं वह रोजगार के लिहाज से यदि ठीक मान लिया तो क्या अपने देश की हवा, मिट्टी, पानी और आदमी की सेहत पर ध्यान देना छोड़ दिया जाए?''

''मैं समझी नहीं बेटा। साफ–साफ बताओ....इससे हवा, पानी, जमीन और आदमी पर क्या असर पड़ेगा। मैं तो यही समझती रही कि यह बहुत अच्छा काम है। सरकार की कोई योजना है। इससे इलाके के लोगों को रोजगार मिलेगा। यदि इससे पानी, जमीन और हवा पर असर पड़ेगा तो उसे भी मैं जान तो लूं।''

''मां, आप इतना तो जानती ही होंगी कि लगने वाली फैक्ट्री अमेरिका की है। यह फैक्ट्री कोकाकोला है। यह कोकाकोला बनाती है। और जानती हैं इसमें 99 प्रतिशत पानी होता है बाकी एक प्रतिशत में चीनी, कई तरह के रसायन और अमेरिका से लाया गया कोक फल डाला जाता है। वैज्ञानिक कहते हैं, यह कोक बहुत ही जहरीला होता है। इतना जहरीला की हड्डी भी गला दे। हां, पाताल का अकूत पानी मशीन से खींचा जाएगा । इससे पानी का जलस्तर बहुत घट जाता है। खेती करना मुश्किल हो जाता है। जमीन बंजर होने लगती है। जो आदमी पीता है उसके बीमारियां धर लेती हैं। अब आप बताइए, ऐसी फैक्ट्री लगनी चाहिए?''

'बेटा! यह अमरूद नहीं खाया। अरे एक भी नहीं खाया। दिनभर तू भूखा ही रहा?''

''मां, मधु से मैंने स्वदेशी नमक लाने को कहा था। लेकिन उसने बताया आप जो नमक कल लाईं थी उसके बारे में वह कुछ ठीक से कह नहीं सकती कि वह स्वदेशी ही है या....।''

''बेटा, तुम तो हमेशा स्वदेशी नमक ही खाते रहे हो। आज बीमारी की हालात में भी तुम स्वदेशी नमक ढूढ रहे हो। अरे सेहत ठीक हो जाएगी तो बिराव करना। लो अमरूद और यह नमक खा लो। भूखे रहना ठीक नहीं। अरे नमक न सही अमरूद तो अपनी ही माटी का है।''

''यही सुघन पटेल का घर है?''

''हां यही है। बोलो क्या बात है?''

'मुझे सुघन से मिलना है। इंस्पेक्टर साहब ने बुलाया है। '

'किस काम से?'

'आप के नाम एफआईआर है।''

''एफआईआर?''

'हां, एफआईआर है। कुछ महीने पहले सहतरिया में कोकाकोला कंपनी के विरोध में लोगों को भड़काया था। इलाके में अशांति और दंगा भड़काने के आरोप है मिस्टर आप पर। ''

''लेकिन मैं तो कई महीने से चारपाई पर हूं। न खा–पी सकता हूं। न चलफिर सकता हूं।''

पुलिस वाला सुघन की हालात देखकर वापस लौट गया। उसने इतना कहा, आप को थाने चलना पड़ सकता है।

थोड़ी देर में पुलिस इंस्पेक्टर जीवन सिंह गाड़ी से आ पहुंचा। उसने सुघन के बारे में सुघन के पड़ोसी से उसके महीनों से बीमार होने की सच्चाई के बारे में पूछा। पड़ोसी ने सुघन के कई महीने से बीमार होने और हालात अत्यंत नाजुक होने की भी पुष्टि की। कुछ देर इंस्पेक्टर सुघन, रमा, सुघन की मां, और रमन से तरह–तरह की बातें वह पूछता रहा। जब उसे रपट फर्जी होने का सबूत मिल गया तो वह चुपचाप लौट गया।

देर रात एक स्वदेशी इंकलाबी सुघन से मिलने आया। उसने थाने में उसके खिलाफ दर्ज रपट के बारे में विस्तार से बताया और यह भी कहा, यह सब सरकार और कोकाकोला के मिलीभगत का परिणाम है। आगे पुलिस से सावधान रहने की जरूरत है। क्योंकि पुलिस अब आप को गिरफ्तार करने का दूसरा रास्ता तलाश कर सकती है। उसे संदेह है, आंदोलन को भड़काने में आप का प्रमुख हाथ है, क्यों कि स्वदेशी नमक के मामले में आप पहले पुलिस से भिड़ चुके हैं। पुलिस को तो उसमें मुंह की खानी पड़ी थी। खिसयाई बिल्ली खंभा नोचे वाली बात चल रही है। उस मामले को वह फिर जिंदा कर सकती है।

इंकलाबियों ने कोकाकोला के लिए जमीन अधिग्रहीत करने की सरकारी योजना को विफल कर दिया था। जिलाधिकारी के लिए यह आत्मसम्मान का विषय बन गया था। उसे डर था यदि आंदोलन को दबाने में जिला प्रशासन विफल रहा तो सारा इंल्जाम उसपर ही सरकार थोपेगी और उसे दंडित होना पड़ सकता है।

सुघन को प्रशासन, शासन और कोक कंपनी की मिलीभगत से होने वाली उसके ऊपर कार्रवाई के बारे में अनुमान लग गया। उसे इस बात की खुशी हुई कि स्वदेशी नमक का मुद्‌दा एक बार फिर उछलेगा। इससे जनता को स्व्देशी का गौरव समझ में आ जाएगा।

अगले दिन पुलिस की तरफ से नमक के पुराने मामले में सुघन के गिरफ्तारी का वारंट आ गया। सुघन की हालात में सुधार आ चुका था लेकिन इस काबिल वह नहीं हो पाया था कि इस मामले में दौड़धूप करे और स्वदेशी आंदोलन की धार तेज करे।

सुघन उसी दिन न्यायालय में पेश हो गया। उसने अपना इंलजाम स्वीकार कर लिया कि स्वदेशी नमक के नाम पर विदेशी नमक की खपत बढ़ाने वाले व्यापारी को उसने दंडों से पीटा था। लेकिन उसकी मंशा व्यापारी को किसी तरह शारीरिक चोट पहुंचाना नहीं बल्कि उसे गलत कार्य के लिए डरवाना था। लेकिन पुलिस की यह बात गलत है कि उसने कानून अपने हाथ में लिया था।

'सुघन को जेल भेज दिया गया। वह जेल में भी स्वदेशी का डंका बजाता रहा। उससे मिलने वाले कई आंदोलनकारी आते और उसका कुशल–क्षेम पूछ कर चले जाते। जेल में उसके संकल्प को तुड़वाने के लिए उसे विदेशी नमक से बना खाना और कोक की बोतले दी जातीं। सुघन खाने से इनकार करता रहा। उसकी हालात जब बहुत नाजुक हो गई तो उसे जेल से अस्पताल ले जाया गया।

डॉक्टरों ने उसे अंडे, पावरोटी और दाल लेने की सलाह दी। उसने अंडे और पावरोटी लेने से इंकार कर दिया।

दोपहर उसके घर से बना भोजन आया। उसने पूछा–स्वदेशी नमक ले आए थे कि नहीं। हां, ले आए थे, उसे ही भोजन में डाला गया है। मधु ने विश्वास के साथ बताया। ***

आर्यों की महान विद्या

ईश्वर प्रदत्त चार वेद

वेद	प्राप्तकर्त्ता	विषय
ऋग्वेद	ऋषि अग्नि	ज्ञान
यजुर्वेद	ऋषि वायु	कर्म
सामवेद	ऋषि आदित्य	उपासना
अथर्ववेद	ऋषि अङ्गिरा	विज्ञान

ऋषिकृत् ग्रन्थ

छः अङ्ग

१. शिक्षा
२. कल्प
३. व्याकरण
४. निरुक्त
५. छंद
६. ज्योतिष्

छः उपाङ्ग

दर्शन	रचियता
१. पूर्वमीमांसा	जैमिनि मुनि
२. वैशेषिक	कणाद् मुनि
३. न्याय	गौतम मुनि
४. योग	पतंजलि मुनि
५. सांख्य	कपिल मुनि
६. वेदान्त	व्यास मुनि

वेद	उपवेद	उपवेद का विषय	ब्राह्मण ग्रन्थ
ऋग्वेद का	१. आयुर्वेद	वैद्यक शास्त्र	१. ऐतरेय ब्राह्मण
यजुर्वेद का	२. धनुर्वेद	राजनीति विद्या	२. शतपथ ब्राह्मण
सामवेद का	३. गान्धर्ववेद	गानविद्या	३. साम ब्राह्मण
अथर्ववेद का	४. अर्थवेद	शिल्प विद्या	४. गोपथ ब्राह्मण

दस उपनिषद्
१. ईश २. केन ३. कठ ४. प्रश्न ५. मुण्डक
६. माण्डूक्य ७. ऐतरेय ८. तैतिरीय ९. छान्दोग्य १०. बृहदारण्यक

ऋषि निर्देश - इनमें भी जो-जो वेद विरूद्ध प्रतीत हो उसे छोड़ देना क्योंकि वेद ईश्वरकृत होने से निर्भ्रान्त, स्वतः प्रमाण, अर्थात् वेद का प्रमाण वेद से ही होता है ब्राह्मणादि ग्रंथ परतः प्रमाण अर्थात् इनका प्रमाण वेदाधीन है।

आर्य विद्या का प्रवेश द्वार-"सत्यार्थप्रकाश एवं ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका"